बाधाओं को हटाकर एकता बनाएं

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी
नई दिल्ली, मार्च 1998

बाधाओं को हटाकर एकता बनायें

24–25 जनवरी, 1998 को नई दिल्ली में हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की विस्तृत परिपूर्ण सभा में महा सचिव कामरेड लाल सिंह द्वारा पेश की गई ड्राफ़्ट रिपोर्ट

प्रथम प्रकाशनः मार्च 1998

कीमत : 40 रूपया

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के लिये
प्रकाशक और वितरक
लोक आवाज़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स
8/251 डी•डी•ए• फ्लैट्स, कालकाजी, नई दिल्ली 110019

प्रकाशक की सूचना

"बाधाओं को हटाकर एकता बनायें"—यह दस्तावेज़ 24—25 जनवरी 1998 को हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की विस्तृत परिपूर्ण सभा में हुई बातचीत का नतीजा है। इसमें, मजदूर वर्ग आन्दोलन के वस्तुगत और आत्मगत हालातों के बारे में और इन हालातों के विश्लेषण के आधार पर हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की कार्य योजना पर दो दस्तावेज़ चर्चा के लिये पेश किये गये हैं। विस्तृत परिपूर्ण सभा इनसे सहमत थी, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के फैसले के अनुसार अब इन्हें चर्चा के लिये प्रकाशित किया जा रहा है।

मार्च 1998

विषय सूची

आमुख

भाग 1

आन्दोलन कहां है और हमारे कार्य क्या है?

भाग 2

हिन्दोस्तान का कम्युनिस्ट आन्दोलन – हालात एवं संभावनायें

भाग 3

कार्य की योजना

आमुख

बीसवीं सदी के आखिरी दो सालों में हिन्दोस्तानी समाज सब तरफा संकट में फंसा हुआ है। सरकार का संकट गंभीर है। जिंदगी के बिगड़ते हालातों के खिलाफ़ मजदूर वर्ग और दबे–कुचले लोगों का विरोध आज भी सरमायदारों और उनके सहयोगियों के हाथों में खिलौना बना हुआ है और कम्युनिस्ट आन्दोलन बंटा हुआ है। सन् 1992 में, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी ने शीत युद्ध के पश्चात की अवधि में हिन्दुस्तान के कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता को पुनःस्थापित करने की समस्याओं को सुलझाने का निश्चय किया। 1993 में तीसरी परामर्शात्मक गोष्ठी हुई और "हिन्दोस्तान किस दिशा में?" को चर्चा के लिये प्रकाशित किया गया। उस समय से काफ़ी काम किया गया है और खास कामयाबियां हासिल की गई हैं। आज, हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट एक दूसरे से अलग नहीं रह गये हैं। वे लगातार आपस में सलाह–मश्वरा व बातचीत कर रहे हैं। मजदूरों और प्रगतिशील ताकतों के व्यापक जनसमुदाय में यह चेतना आई है कि कम्युनिस्ट एकता को पुनःस्थापित करना आवश्यक है। यह एक अच्छी चीज है। लेकिन, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन हिन्दोस्तान के मजदूर आन्दोलन के नेतृत्व की भूमिका अदा करने के लिये आगे नहीं आया है, और न ही बुनियादी तबदीलियों के लिये हिन्दोस्तानी लोगों के आन्दोलन की अगुवाई करने के लिये मजदूर वर्ग अग्रसर हुआ है। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता को पुनःस्थापित करने के लिये अगला कदम उठाना जरूरी है।

इस बात को ध्यान में रखते हुए, हम यहां विचार–विमर्श इस मुद्दे पर चालू करते हैं कि विचारधारात्मक संघर्ष का रूप व उसका सार क्या होने चाहिये। इसके जरिये, सम्पूर्ण पार्टी सभी कम्युनिस्ट व प्रगतिशील ताकतों को साथ लेकर अगला कदम लेने के लिये पूरी तरह तैयार हो जायेगी। हम चाहते हैं कि हमारी पार्टी अपनी चेतना व संगठन की पूरी क्षमता को इस काम में लगाये तथा कम्युनिस्ट आन्दोलन में संघर्ष करे। हम काम को इस तरह तय करेंगे कि हमारी सफलता इस बात से नापी जाये कि कम्युनिस्ट और जागरूक मजदूर हमारे यहां पर निश्चय, किये गये लक्ष्यों को किस हद तक अपनाते हैं।

हमारे सिद्धान्त और विचारधारा हमें बताते हैं कि हिन्दोस्तान के लोगों के सचेत आन्दोलन से ही हिन्दोस्तान का पुनर्गठन होगा। विजय प्राप्त करने के लिये चेतना व

संगठन बनाने की एक पूरी प्रक्रिया है। हमारी पार्टी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन के हिस्से के रूप में, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग के नेता के रूप में, मजदूर वर्ग और आखिर में जनता इस चेतना व संगठन को हासिल करेगीं।

वर्तमान स्थिति की समीक्षा करते हुए हम विचार–विमर्श चालू करते हैं। वर्तमान की समीक्षा करने का मतलब है वर्तमान को बदलने के लिये कार्य तय करना। हम इस विषय पर भी बातचीत करेंगे कि इस कार्य को करने के लिये इस समय किस सामाजिक ताकत को बुलाना चाहिये, और क्या तरीके अपनाने चाहिये। संक्षेप में, हम एक योजना बनाकर यहां से निकलना चाहते हैं। यह योजना सचेत व कार्यरत योजना होनी चाहिये, ताकि हम वर्तमान स्थिति में भूमिका अदा कर सकें, ताकि हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता के पुनःनिर्माण में अगला कदम उठाया जा सके। केन्द्रीय कमेटी ने एक विस्तृत परिपूर्ण सभा आयोजित की है ताकि निर्णय लेने में अधिक से अधिक योगदान मिल सके। इसके बाद, पार्टी एवं उसके समर्थकों को हमारे सामने के कार्यों को पूरा करने के लिये पूरी तरह लामबन्द किया जायेगा।

भाग १

आन्दोलन कहां है और हमारे कार्य क्या है?

परिचय

वस्तुगत इंकलाबी प्रक्रिया किसी खास समय पर कहां खड़ी है, इस सवाल का विश्लेषण करना जरूरी है ताकि आत्मगत, यानि जागरूक साधन को वक्त की जरूरत के अनुसार विकसित किया जा सके। इसी आधार पर कम्युनिस्टों को अपनी युक्तियां बनानी होगी ताकि हम समाजवाद और कम्युनिज़्म के अपने लक्ष्य को हासिल कर सकें।

मार्क्सवाद–लेनिनवाद के विज्ञान ने यह दिखाया है कि मानव समाज की वस्तुगत गति की दिशा पूंजीवाद से समाजवाद और कम्युनिज़्म की ओर है और मजदूर वर्ग निजी गति से ही इस दिशा में खिंच जाता है। पर यह भी देखने में आया है कि पूंजीवाद पर समाजवाद की विजय को हासिल करने और इसकी हिफ़ाज़त करने के लिये सबसे अगुवा इंकलाबी सिद्धान्त की जरूरत है जो कि आन्दोलन का मार्गदर्शन करे और मजदूर वर्ग को अगुवाई देने के लिये एक पार्टी की जरूरत है जो ऐसे सिद्धान्त पर आधारित हो।

हम ऐसे युग में जी रहे हैं जब पूंजीवाद अपने उच्चतम व अंतिम स्तर तक पहुंच गया है। लेनिन के अनुसार, यह साम्राज्यवाद और सर्वहारा इंकलाब का युग है। हमने यह समझा है कि इस युग के दौरान, इस समय दुनिया इंकलाब के पीछे हटने की अवधि से गुजर रही है। यह अवधि सोवियत संघ के पतन से शुरु हुई। बुनियादी अंतर्विरोध अभी भी पूंजी और श्रम के बीच, पूंजीवादी व्यवस्था और समाजवादी व्यवस्था के बीच है। हरेक देश में मुख्य अंतर्विरोध शोषकों और शोषितों के बीच, साम्राज्यवाद और दबे कुचले लोगो के बीच, और अंतर–साम्राज्यवादी व अंतर–इजारेदारी अंतरर्विरोध हैं। इस समय आंदोलन कहां है, यह समझने का मतलब है इन अंतर्विरोधों की गति और विकास को समझना और वर्तमान हालातों से क्या देखने में आता है, उसे समझना।

1998 का साल हिन्दोस्तानी सरमायदारों के बीच काफ़ी अनिश्चितता और फूट के साथ शुरू हुआ। यह साल दुनिया की पूंजीवादी व्यवस्था के भविष्य और उसके काम–काज के बारे में भी काफी अनिश्चितता के साथ शुरु हुआ, हालांकि मुख्य पश्चिमी बैंकों ने पूर्वी एशिया के संकट से बहुत मुनाफे कमाये, संकट के बोझ को दूसरों पर लादकर। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय हादसे क्या दिखाते हैं? क्या वे यही दिखाते हैं कि सरमायदार अभी भी हमलावर हैं, या क्या इस अवधि की यह विशेषता बदल गई है? कौन सी नई विशेषतायें उभर कर आगे आई हैं और उनका क्या महत्व है? इससे हम कम्युनिस्टों को क्या सीखने को मिलता है, कि हमें इस समय वर्ग संघर्ष में कैसे हस्तक्षेप करना चाहिये?

अंतर्राष्ट्रीय हादसे क्या दिखाते हैं?

इस दशक की शुरुआत में विश्व पूंजीवाद को समाजवाद के खिलाफ़ जीवन–मौत के संघर्ष में एक विजय मिली, सोवियत संघ का पतन हुआ और 1991 में पैरिस चार्टर पर हस्ताक्षर किया गया, जिसमें अमरीका और दुसरे पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों नें, बड़ी हेकड़ी के साथ यह ऐलान किया कि अब से "मुक्त बाजार की अर्थव्यवस्था", "बहुमतवाद" और "बहु पार्टी लोकतंत्र" के नमूने दुनिया के सभी देशों पर थोपे जायेंगे। सर्वहारा व लोगों और समाजवाद के खिलाफ़ दुनिया के पूंजीवाद के एक भयानक हमले की यह निशानी थी। अमरीकी साम्राज्यवाद ने बड़ी बेशर्मी से यह ऐलान कर दिया कि उसका इरादा है एक "नयी विश्व व्यवस्था" स्थापित करना, जो कि दूसरे देशों व लोगों के आर्थिक और फौजी दमन के जरिये अमरीका के हुक्म के अधीन होगा। रूसी संघ की सीमाओं तक नेटो का हमलावर विस्तार, बोस्निया में फौजी हस्तक्षेप, ईराक के खिलाफ बार बार हमले, सोमालिया और हैटी में फौजी हस्तक्षेप और क्यूबा की लगातार कठिन आर्थिक नाकेबंदी–ये सारे हादसे अमरीकी साम्राज्यवादियों और उनके मित्रों के इरादों को स्पष्ट करते हैं। आर्थिक क्षेत्र में अमरीका और पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने भूतपूर्व सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के देशों के विशाल बाजारों पर कब्ज़ा करने के लिये हमलावर कदम उठाये हैं। व्यापार युद्धों के जरिये जापान के साथ होड़ लगाना और तेज़ हो गया। विश्व व्यापार संगठन को थोप दिया गया ताकि पूरी दुनिया के बाजारों में साम्राज्यवादी हस्तक्षेप और आसान हो जाये।

लगभग दो साल पहले, 1995 के अन्त से, यह देखने में आया है कि विश्व पूंजीवाद

को इन्हीं आर्थिक व राजनीतिक मकसदों को हासिल करने के लिये एक अलग तरीका अपनाना पड़ रहा है, एक बदला हुआ सुर गाना पड़ रहा है। जब कि धमकियां और फौजी हमले जारी हैं, तो साथ साथ विश्व पूंजीवाद "मानवीय चेहरे वाला उदारीकरण" और "विकास के साथ बराबरी" के नारे लगा रहा है, और सभी देशों पर ये नुस्खे थोप रहा है। दुनिया के कई देशों में सोशल डेमोक्रेटिक सरकारें लाई गयी हैं, जिनका काम है "मानवीय चेहरे वाला उदारीकरण" और "विकास के साथ बराबरी" सुनिश्चत करना। सोशल डेमोक्रेटों के मुकाबले पोलैंड में लेच वालेसा की पराजय, पिछले चुनावों द्वारा अल्बेनिया में सोशल डेमोक्रेटों की सत्ता कायम होना, इटली व हिन्दोस्तान जैसे देशों में केन्द्रवामपंथी गठजोड़ों की स्थापना, रूस में जुगानोव की कम्युनिस्ट पार्टी की विजय, नेपाल में कम्युनिस्टों का सत्ता में आना, ब्रिटेन में लेबर पार्टी और फ्रांस में समाजवादी पार्टी की विजय, ये सारे इसी रवैये को दर्शाते हैं।

इन हादसों के बारे में विश्व पूंजीवाद के मुखियों ने कोई शोर नहीं मचाया है। बल्कि, सोशल डेमोक्रेसी की विजय से पूंजीवादी–साम्राज्यवादी व्यवस्था को कोई धमकी तो है ही नहीं, विश्व पूंजीवाद की हमलावर प्रगति पर कोई रोक तो है ही नहीं। सभी लक्षणों से यह अहसास होता है कि साम्राज्यवाद ने ही सोशल डेमोक्रेसी को सत्ता में खड़ा किया है। उदारतावाद के साथ सोशल डेमोक्रेसी का विवाह विश्व पूंजीवाद ने आयोजित किया है, ताकि सोशल डेमोक्रेसी वह काम करे जिसके लिये वह काबिल है, वह काम जो वह पूरी सदी के दौरान करता आया है। यह काम है मजदूर वर्ग और लोगों को बहकाना और शक्तिहीन कर देना, यह भ्रम पैदा करना कि पूंजीवाद से ही उनका उद्धार हो सकता है अगर यह सही ढंग से "मानवीय चेहरे" के साथ चलाया जाये। यह काम है इस बात को सुनिश्चित करना कि मजदूर वर्ग और मेहनतकश जनता पूंजीवादी हमले का मुकाबला करने के लिये एक स्पष्ट कार्यक्रम के आधार पर संगठित न हों, इंकलाब के लिये वस्तुगत हालातें न पैदा करें।

विश्व पूंजीवाद के सुर बदलने के संदेश विश्व बैंक व अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई•एम•एफ•) से ही आ रहे हैं। विश्व बैंक करोड़ों डालर खर्च करके अपने कर्मचारियों को ट्रेनिंग दे रहा है, कि कैसे उदारीकरण और निजीकरण की रणनीति में "गरीबी कम करने" के कार्यक्रम मिला दिये जा सकें। अब दक्षिण पूर्वी एशिया में मुद्रा संकट के ठीक बाद, "एशिया वीक" नामक पत्रिका उन संकट ग्रस्त देशों में समाजिक उथल पुथल को रोकने के लिये गरीबी कम करने के कार्यक्रमों की सख़्त जरूरत पर ज़ोर दे रही है।

दक्षिण कोरिया, थाइलैंड और इंडोनेशिया को बचाने के लिये आई•एम•एफ• ऐसे कदम ले रहा है, जो कि इन देशों की अर्थव्यवस्थाओं को पूंजीवादी लूट खसौट के शिकार बनाये रखते हुये, साथ ही साथ "मानवीय चेहरा" भी अपना रहे हैं।

सोशल डेमोक्रेसी का यह पुनःजागरण क्या दिखाता है? जब कि अंतर्विरोध और तेज़ हो रहे हैं, जब कि पूंजीवादी हमले का विरोध असंगठित और कमजोर है, तो सरमायदार इस विरोध का अपने फायदे के लिये इस्तेमाल कर पा रहे हैं। किसी भी पूंजीवादी देश में अब तक एक जागरूक जन आन्दोलन नहीं देखने में आया है। हर देश में पूंजीवादी सुधारों के खिलाफ़ विरोध सोशल डेमोक्रेटिक ताकतों के लिये एक मौका बन जाता है कि वे कैसे सरमायदारों का भरोसा पाकर राज्य को चलायें, संघर्षों के बीच समझौता करायें और सरमायदारों के हित में नीतियां अपनायें। हिन्दोस्तान में पिछले दो सालों में ठीक ऐसा ही हुआ है, जहाँ सरमायदारों ने पूरी हालत का फायदा उठाया है।

वस्तुगत तौर पर अंतर्विरोध बढ़ रहे हैं, शोषकों और शोषितों के बीच तथा शोषकों के आपस में। उत्तरीय अमरीका व यूरोप में मेहनतकशों पर तरह तरह के हमलों के खिलाफ़ विरोध–मसलन कनाडा में बड़े पैमाने पर फैक्टरियां बंद किये जाने पर मजदूरों की आम हड़ताल, टीचरों की हड़ताल, दक्षिण कोरिया में मजदूरों के विशाल प्रदर्शन, दुनिया भर में विश्व व्यापार संगठन के खिलाफ़ विरोध, हेल्म्स–बरटन एक्ट और एपेक का विरोध, ईराक पर अमरीकी हमले की धमकी का विरोध, ये सब यही दिखाते हैं कि अंतर्विरोध और तेज़ हो रहे हैं। परन्तु ये अंतर्विरोध अब भी उस हद तक प्रौढ़ नहीं हुये हैं कि यह कहा जा सके कि शीत युद्ध के बाद की अवधि में सरमायदारों का जो ऊँचा स्थान था वह नीचे हो गया है। जन संघर्ष बढ़ तो रहे हैं परन्तु जब तक वे प्रतिक्रियाकारी और असंगठित रहते हैं, तब तक उन्हें बिगाड़ा, तोड़ा–मरोड़ा और गुमराह किया जा रहा है, अराजकता और हिंसा के जरिये उन्हें खत्म किया जा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय सरमायदार इन सभी मोर्चों पर बहुत सक्रिय हैं। इस हालत में निश्चयात्मक रूप से अन्तर तब आयेगा जब इन असंगठित मुठभेड़ों की जगह पर जागरूक जन आन्दोलन होगा।

अगर बीसवीं सदी के तजुर्बे से देखा जाये तो सोशल डेमोक्रेसी साम्राज्यवाद का एक विश्वसनीय मित्र है, मेहनतकशों को निहत्था करने के लिये, ताकि वे जागरूक संघर्ष

न कर पायें। गये दिनों में इसने तानाशाही के लिये हालात तैयार किये हैं। इस समय, सोशल डेमोक्रेटिक राजनीति का इस्तेमाल किया जाता है लोगों को दुनिया के सरमायदारों के इरादों और किसी भी देश के सरमायदारों के इरादों के पीछे लामबंद करने के लिये, ताकि वे अपने आज़ाद लक्ष्यो को त्याग दें। पूंजी और मेहनत के हितो के बीच समझौता करने के लिये सोशल डेमोक्रेटिक राजनीति ने "आई•एम•एफ• समाजवाद" को अपनाया है, जिसका मुख्य नुस्खा है "गरीबी कम करना" और मुख्य सिद्धान्त है "बराबर वितरण"। पूर्वी यूरोप और एशिया के देशों के लिये सोशल डेमोक्रेसी सरमायदारों के कार्यक्रम का मुख्य सार है। टोनी ब्लेयर और क्लिंटन जैसों के लिये सोशल डेमोक्रेटिक राजनीति और उदारतावाद एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

1995 के बाद के अंतर्राष्ट्रीय हादसे यह दिखाते हैं कि सोवियत संघ के विघटन के बाद साम्राज्यवाद जब कि बहुत जोश में था, तो अब वे और ज्यादा सोच विचार वाली नीति अपना रहे हैं, जिसके दो उद्देश्य हैं,

(1) विचारधारात्मक रूप से लोगों को निहत्था करना और
(2) उदारीकरण और निजीकरण के कदमों को और गहराई तक ले जाना।

सोशल डेमोक्रेसी दुनिया के सरमायदारों के लिये आगे आया है, वह सब कुछ करने के लिये जो उदारतावाद और "मुक्त बाजार के हिमायती" न हासिल कर सके।

हाल के सालों की एक खासीयत यह रही है कि अंतर साम्राज्यवादी और अंतर सरमायदारी अंतर्विरोध और तेज़ हो गये हैं। अमरीका और रूसी संघ के बीच अंतर्विरोध पिछले दो सालों में और तेज़ हो गये हैं, और रूस ने यह प्रकट किया है कि वह नेंटो के पूर्वी विस्तार का विरोध करेगा। परमाणु सुरक्षा के सवाल पर ईराक पर बम बरसाने की अमरीका की एकमत कोशिश रोकी गई, रूस, फ्रांस, इत्यादि के विरोध की वजह से। अमरीका और जापान के बीच झगड़े बढ़ते जा रहे हैं और एशियाई बाघों के पतन से अंतर साम्राज्यवादी और अंतर सरमायदारी अंतर्विरोध और तेज हो गये हैं। साथ ही साथ, पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतों और एशिया की जनता के बीच अंतर्विरोध और बढ़ गया है।

एशियाई बाघों का पतन काफ़ी भयानक रूप से हुआ है। ये देश, जिन्हें सफलता की

मिसाल बताई जाती थी, साम्राज्यवाद और अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी द्वारा रचित एक दिखावा ही थे, जिन्हें अमरीकी फौजी तंत्र का समर्थन प्राप्त था। मई से नवंबर 1997 के बीच थाइलैंड, इंडोनेशिया और दक्षिण कोरिया की राष्ट्रीय मुद्राओं की कीमत 54 प्रतिशत, 50 प्रतिशत, 39 प्रतिशत और 25 प्रतिशत से गिर गई। जनवरी तक, इन मुद्राओं की कीमत और भी गिर गई थी, जब इंडोनेशिया के रूपय्या की कीमत गिरीं। जब 70 और 80 की दशकों में इन देशों की अर्थव्यवस्थाओं में तेजी से बढ़ोतरी हुई थी, तो उनका विदेशी कर्जा भी बहुत बढ़ गया था। 1994 और 1996 के बीच, निर्यात कम होते गये और बहुत सी वित्त पूंजी इन देशों में डाली गई, मुख्यतः कम समय की धनराशि के रूप में, जो कि एक बैंक से दूसरे बैंक में जाती रही, और फिर जब 1997 में मुद्रा की कीमत गिरी तो यह धनराशि और भी तेज़ गति से बाहर निकल गई। इन देशों को बचाने के नाम पर अब आई•एम•एफ• उनमें जो अरबों डालर डाल रहा है, इनसे उन पर साम्राज्यवादी जकड़ और बढ़ जायेगा।

कल तक एशियाई बाघ पूंजीवादी सुधारों के हीरो माने जाते थे। विश्व बैंक और आई•एम•एफ• के विशेषज्ञों ने पूर्वी एशिया की चमत्कार की प्रशंसा में किताबें लिख डालीं। अब इस चमत्कार और इन हीरो बनने वालों का क्या हुआ? बाघ होना तो दूर रहे, अब आई•एम•एफ• के बचाऊ मिशनों के सामने वे बिल्ली के बच्चे लगते हैं। यह अंदाज़ा लगाया जा रहा है कि इतने भारी मुद्रा अवमूल्यन की वजह से, और उद्योग व खेती पर उसके असर की वजह से, इन देशों में लाखों मजदूरों की नौकरियां चली जायेंगीं। साथ–ही साथ यह भी जाना जाता है कि बहुत से अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थानों ने इन संकटग्रस्त मुद्राओं पर सट्टा लगाकर, रातों–रात अरबों डालर कमाये हैं।

दक्षिण पूर्वी एशिया में संकट, इससे पहले मेक्सिको व दूसरे लैटिन अमरीकी देशों के संकट की तरह, पूंजीवादी सुधारों का सामना करने वाले सभी लोगों के लिये एक चेतावनी है कि उनके साथ क्या हो सकता है। इस संकट की वजह से सामाजिक अंतर्विरोध और तेज़ होंगे। एशिया के अधिकतर लोगों की सोच में पूंजीवाद की विश्वसनीयता काफी घट गई है।

आर्थिक मामलों, मसलन व्यापार व बाजारों पर हिन्दोस्तान और पश्चिमी देशों के बीच अंतर्विरोध जापान व कोरिया के बड़े उद्योगपतियों और पश्चिमी देशों के बीच अंतर्विरोध से कहीं कम है। राजनीतिक, रणनैतिक और फौजी क्षेत्रों में हिन्दोस्तान व

पश्चिमी देश कुत्ते–बिल्ली जैसे लड़ रहे हैं। पूरे तौर पर देखा जाये तो हिन्दोस्तान और अमरीका समझौता कर रहे हैं और साथ ही साथ टकरा भी रहे हैं।

हिन्दोस्तान के सरमायदार इस समय पूरी कोशिश कर रहे हैं कि एक बड़ी ताकत बनने के अपने इरादों के पीछे हिन्दोस्तानी लोगों को लामबंद किया जाये। वे "गरीबी घटाने" की बात कर रहे हैं लोगों को यह भरोसा दिलाने के लिये कि अब लोगों को सरमायदारों का विरोध नहीं करना चाहिये बल्कि सरमायदारों के साथ मिलकर काम करना चाहिये। सरमायदार "राष्ट्रीय एकता" की हिफ़ाज़त की मांग कर रहे हैं, दूसरे साम्राज्यवादी देशों की तरह "हिन्दोस्तान को दुनिया में प्रतियोगितावादी बनाने" की मांग कर रहे हैं।

एशियाई बाघों की अर्थव्यवस्थाओं का हाल में चढ़ना–गिरना पूंजीवाद के असमान विकास के नियम को दर्शाता है। वह यह दिखाता है कि पूंजीवाद संकटों के बिना विकसित नहीं हो सकता है। जैसे जैसे इजारेदारी बढ़ेगा और तकनीकी इंकलाब होगा व पूंजी के आने जाने के रास्ते से राष्ट्रीय रूकावटें दूर होंगी, वैसे वैसे संकट और तेज़ होता जायेगा, और अधिक नुकसान होता जायेगा। इन घटनाओं से यह भी देखने में आता है कि सबसे शक्तिशाली वित्त ताकतें कैसे संकट के बोझ को निर्भरशील देशों व उनके लोगों पर लाद सकते हैं। पश्चिमी देशों के वित्त सम्राटों ने पूर्वी एशिया के पतन से फायदा उठाकर, दुनिया के बाजार में अपना भाव बढ़ाया और उन देशों की अर्थव्यवस्थाओं को और दबाया हैं।

अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी अपनी तेज गति से बढ़ोतरी के रास्ते से सभी रूकावटों को दूर करने की कोशिश कर रही है। इससे अंतर साम्राज्यवादी अंतर्विरोध बहुत तेज़ हो रहे हैं। ऐसा भी हो सकता है कि जैसे जैसे साम्राज्यवाद पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशिया पर अपना फंदा कसता जायेगा, वैसे वैसे अमरीका व यूरोपीय साम्राज्यवादियों के बीच, अमरीका–यूरोप व जापान के बीच, अमरीका और चीन तथा अमरीका और हिन्दोस्तान के बीच अंतर साम्राज्यवादी अंतर्विरोध और तेज होते जायेंगे। आर्थिक युद्धों के फौजी युद्धों में भड़क उठने की संभावना भी है। जापान, हिन्दोस्तान, चीन, कोरिया आदि जैसे एशियाई देशों के सरमायदार मजदूर वर्ग व लोगों को "राष्ट्र की हिफ़ाज़त" यानि अपने इरादों की हिफ़ाज़त में करने के लिये "राष्ट्रवादी" भावनायें उकसाने की कोशिश करेंगे।

सोशल डेमोक्रेसी का काम है हर देश के मजदूर वर्ग को "अपने" सरमायदारों के पीछे लामबंद करना, "राष्ट्र की हिफ़ाज़त" का नारा देकर। असलियत में, हर देश की आजादी व जनता की खुशहाली को खतरा उस देश के सरमायदारों से ही आता है। सरमायदार ही बढ़ते साम्राज्यवादी दमन व लूट खसौट का आधार हैं। मजदूर वर्ग को स्वदेशी सरमायदारों, साम्राज्यवादियों और सभी दूसरी प्रतिक्रियावादी ताकतों जो शोषण और अत्याचार की व्यवस्था को बरकारार रखते हैं, के खिलाफ़ संघर्ष करना होगा।

1952 में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की 19वीं कांग्रेस में जे•वी• स्टालिन ने यह बताया था कि सरमायदारों ने यूरोप में 19वीं सदी में राष्ट्रीय आजादी व प्रभुसत्ता का जो झंडा फहराया था, उन्होंने अब उस झंडे को पैरों तले रौंद दिया है। उन्होंने कहा कि अब से यह झंडा सर्वहारा फहरायेगा, कि अब से सर्वहारा को राष्ट्रीय आजादी व प्रभुसत्ता की हिफ़ाज़त करने के पुण्य काम को निभाना पड़ेगा। सोवियत संघ के पतन के बाद दुनिया की घटनाओं ने फिर एक बार स्टालिन के इस विश्लेषण की पुष्टि कर दी है। जहां भी समाजवाद को गिराया गया, जैसे कि अल्बेनिया में, लोग सिर्फ समाजवाद ही नहीं खोये, बल्कि अपनी आजादी व प्रभुसत्ता भी। कम्युनिस्टों को उभरते हुये हालातों के आधार पर सर्वहारा व सभी आज़ादी पसंद लोगों को यह समझाना होगा कि समाजवाद राष्ट्रों व लोगों की आज़ादी के लिये जरूरी शर्त है।

अंतर्राष्ट्रीय सरमायदार सब कुछ तोड़ मरोड़कर इतिहास के पहिये को पीछे की तरफ धकेलने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि खास तौर पर बीसवीं सदी की उपलब्धियों को नकारा जाये। सरमायदार बहुत ही मनमानी, गैर सावधानी व अस्पष्टता से काम ले रहे हैं, यहां तक कि उनके अपने कानून व संस्थान खुद ही बदनाम हो रहे है। इन घटनाओं की वजह से लोगों पर बेहद दबाव है कि वे इसके विरोध में संघर्ष करें। सरमायदारों की अविश्वसनीयता, मनमानी और अस्पष्टता का बार–बार राजनीतिक पर्दाफाश हो रहा है। यह एक बहुत शानदार मौका है कि सक्रियता के साथ एक विकल्प तैयार किया जाये, सरमायदारों को कटघरे में खड़ा किया जाये, और फिर हराया जाये।

हमारी फलसफ़ा व सिद्धान्त हमें यह बताता है कि इंकलाब और समाजवाद का पीछे हटना साम्राज्यवाद और इंकलाब की इस अवधि में एक सामयिक घटना है। अवश्य

ही इसके बाद पन्ना पलट जायेगा, इंकलाब की धारा फिर बहने लगेगी, 21वीं सदी में सर्वहारा इंकलाबों का दूसरा दौर शुरू होगा, जो एक या कई देशों में पूंजीवाद का तख्ता पलट देगा। जैसा कि लेनिन ने समझाया था, यह पहले से बताना मुमकिन नहीं है कि ठीक कब और कहां साम्राज्यवाद की कड़ी टूटेगी और इंकलाब आगे बढ़ेगा। जिस प्रकार मुख्य अंतर्विरोध अंतर्राष्ट्रीय तौर पर विकसित हो रहे हैं, उससे ऐसा लगता है कि दक्षिण एशिया साम्राज्यवादी जंजीर की कमजोर कड़ी बन सकता है। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के लिये मुख्य सवाल है कि क्या आत्मगत साधन, यानि मजदूर वर्ग की अगुवा पार्टी उस समय हालत को संभालने के लिये तैयार होगी, जब इंकलाब की धारा अपनी दिशा बदलेगी?

हिन्दोस्तान में घटनायें क्या दिखा रही हैं?

जैसे जैसे हिन्दोस्तान पिछले आम चुनावों के बस 20 महीने बाद, फिर आम चुनाव में शामिल हो रहा है, वैसे वैसे यह स्पष्ट हो रहा है कि मुख्य राजनीतिक पार्टियां सरमायदारों के लिये एक विश्वसनीय व स्थायी सरकार बनाने में नाकामयाब हैं। इसी नाकामयाबी की वजह से इन चुनावों को करवाना पड़ा, हालांकि सरमायदारों के कोई भी राजनीतिक मोर्चे इसके लिये पूरी तरह तैयार न थे।

हिन्दोस्तान में राजनीतिक व्यवस्था संकट में है और यह सरकार के संकट से बहुत ही साफ़ रूप से देखने में आ रहा है। सरकार के संकट से पूरी राजनीतिक व्यवस्था बदनाम हो सकती है। सरमायदार तीनों राजनीतिक मोर्चों–कांग्रेस, भाजपा या तीसरा मोर्चा–में से किसी के भी पक्ष में मेहनतकशों के बीच उत्साह नहीं पैदा कर पा रहे हैं। राजनीतिक नेता व पार्टियां एक दूसरे पर कीचड़ उछाल रही हैं। सरकार के सभी संस्थान–नौकरशाही, न्यायशाही, और फौज–आपस में लड़ते हुये और एक दूसरे को नंगा करते हुये, सभी बदनाम हो रहे हैं।

लगभग एक दशक से यह सरकार का संकट चलता आ रहा है। 1996 में लोक सभा चुनावों के ठीक बाद, न तो कांग्रेस और न ही भाजपा शासक वर्गो व साम्राज्यवादियों की जरूरतें पूरी कर पायीं। अंतर्राष्ट्रीय धाराओं के साथ चलते हुये हिन्दोस्तान के सरमायदारों ने कम्युनिस्टों को शामिल करके केन्द्र से वामपंथी गठजोड़ को सत्ता में बिठाया, ताकि "मानवीय चेहरे" के साथ पूंजीवाद और उदारतावाद की हिफ़ाज़त की

जा सके। लेकिन ऐसी सरकार में निहित अस्थायीपन और केन्द्र में विभिन्न इलाकों के सरमायदरों को स्थान देकर जिन अलगाववादी ताकतों को उसने पनपने दिया, वह हिन्दोस्तानी सरमायदारों को पसंद न था। जैसे कि 1991 के मध्यवर्ती चुनावों से सरकार का संकट हल नहीं हुआ, वैसे ही, 1998 के चुनावों से भी इसकी उम्मीद नहीं की जा सकतीं

भाजपा अपने आप को हिन्दोस्तानी सरमायदारों व साम्राज्यवादियों के सामने स्थायी सरकार और "कुशल प्रधान मंत्री" दिलाने के काबिल पेश कर रही है। उसने तरह तरह के समझौते कर रखे हैं, और समाज के सभी हिस्सो को खुश करके वह सभी सरमायदारों से अनुमोदन पाने की कोशिश कर रही है। लेकिन जब से सोनिया गांधी को कांग्रेस के मुख्य प्रचारक के रूप में आगे लाया गया है, और हिन्दोस्तानी व अंतर्राष्ट्रीय समाचार माध्यम से उसे बहुत समर्थन मिला है, तब से यह फिर से लगने लगा है कि इन दोनों के बीच लड़ाई अंत तक चलती रहेगीं। यह मुमकिन है कि न तो कांग्रेस को बहुमत मिले और न ही भाजपा को, कि सरकार का संकट चलता रहे। यह स्पष्ट है कि सरमायदार सरकार के संकट से फायदा उठाकर लोगों को लगातार अनिश्चित हालत में रख रहे हैं, और इस प्रकार मजदूर वर्ग को अपने लक्ष्य तय करने से रोक रहे हैं।

ये चुनाव ऐसे समय पर हो रहे हैं जब हिन्दोस्तान की अर्थव्यवस्था ने अपने वायदों को पूरा तो किया ही नहीं है, बल्कि उसकी गति बहुत धीमी हो गई है। मई 1997 से रूपये की कीमत 12 प्रतिशत से अधिक गिर गई है। और अब 40 रुपया प्रति डालर तक पहुंची है। अनुमान लगाया जा रहा है कि जल्दी ही इसकी कीमत 50 रुपया प्रति डालर हो जायेगीं। इसकी वजह से विदेशी कर्जे का बोझ और आयात की गई वस्तुओं की कीमत बढ़ती जा रही है। मुद्रास्फीति फिर से सैंकड़ो में आ जायेगी, ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है। औद्योगिक विकास धीमा हो गया है और निर्यात भी। बेरोज़गारी बढ़ रही है और 1998 में भी और बढ़ेगी।

हिन्दोस्तानी बाजारों में पूर्वी एशिया के संकट का असर अभी से महसूस होने लगा है। वित्त मंत्री चिदंबरम ने, ब्याज दर बढ़ाने के सबसे आखिरी कदमों की घोषणा करते हुये, राजनीतिक पार्टियों से मांग की कि उन्हें "गैर जिम्मेदार बयान" नहीं देने चाहिये, क्योंकि इससे अर्थव्यवस्था में खौफ पैदा हो जायेगा। मद्रास में फेडरेशन आफ इंडियन

चेम्बर्स आफ कामर्स की सभा में, यह स्पष्ट था कि दक्षिण पूर्वी एशिया के संकट के हिन्दोस्तान पर असर के बारे में हिन्दोस्तान के सरमायदार बहुत फिक्रमंद थे। मूडी ने उधार देने लायक देशों में हिन्दोस्तान को बहुत नीचा स्थान दिया है। गुजराल ने हिन्दोस्तान की अर्थव्यवस्था को एक "हाथी" जैसा बताया है जो बड़ी होशियारी से धीरे धीरे चलता है। चिदंबरम ने यह ऐलान किया कि एशियाई बाघों ने कोई गलती नहीं की थी, कि उदारीकरण और निजीकरण को और तेजी से करना चाहिये। भाजपा ने कहा कि 6 महीने के लिये धनराशि को जमा करके उस पर तेजी से सट्टेबाजी करनी चाहिये–और अगले दिन उन्होंनें इस बयान को इंकार कर दिया। इस घटनाओं से यह स्पष्ट हो रहा है कि हालांकि सभी राजनीतिक दलों के बीच "मानवीय चेहरे के साथ उदारीकरण" और "समानता के साथ विकास" पर सहमति है, परन्तु वे अभी भी एक ऐसी स्पष्ट कार्यदिशा नहीं बना पाये हैं, जो सभी सरमायदारों का भरोसा पा सके।

सरकार का संकट यह दिखाता है कि पुरानी व्यवस्था अब काम नहीं कर रही है। बड़े पूंजीपतियों का गठजोड़ जिसमें विभिन्न इलाकों के जमीन्दार और अलग अलग जतियों व सम्प्रदायों के अभिजात वर्ग शामिल थे और जिनके प्रतिनिधि इंडियन नैशनल कांग्रेस थी, वह पुरानी व्यवस्था थी जिसने कई दशकों तक हिन्दोस्तान के सरमायदारों की सेवा की थी परन्तु, हिन्दोस्तानी पूंजीवाद के विकास से सिर्फ टाटा–बिरला जैसे पुराने औद्योगिक घराने ही अमीर नहीं हुये हैं, बल्कि नये इजारेदार दल भी पैदा हुये हैं। अलग अलग इलाकों से जमीन्दार–पूंजीपति घराने बड़े औद्योगिक घरानों में शामिल हुये हैं। इसकी वजह से विभिन्न बाजारों पर कब्ज़ा करने के लिये इजारेदारों के बीच अन्तर्विरोध और तेज़ हो गये हैं। इसकी वजह से, राजनीतिक सत्ता में हिस्से के लिये विभिन्न इलाकों के सरमायदार दलों के दावे व उम्मीदें भी बढ़ गई हैं।

अंतर साम्राज्यवादी अंतर्विरोधों के तेज़ होने के साथ साथ, हिन्दोस्तानी सरमायदार दक्षिण एशिया और दुनिया में एक बड़ी ताकत बनने की आकांक्षा व प्रेरणा रखते हैं। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये उन्होंने "गुजराल सिद्धान्त" को अपनाया है, जो, इस सिद्धान्त के निर्माता के अनुसार, "जागरूक निजी हित" का सिद्धान्त है। और सरमायदार पाकिस्तान, बांगलादेश व दूसरे पड़ोसी देशों के साथ इस नीति को लागू करने के लिये पूरे दम से आगे बढ़ रहे हैं। हाल के हादसों, मसलन बांगलादेश के साथ ज्योति बसु के समझौते और हिन्दोस्तान–पाकिस्तान संबन्धों के बारे में बाल ठाकरे की बातें हिन्दोस्तानी सरमायदारों के इसी दिशा में बढ़ने के इरादों को दर्शाते हैं।

हिन्दोस्तान की राजनीति में सरमायदारों की हुकूमत की संकट अब एक निरन्तर स्थिति सी हो गई है। जो नयी योजनायें बनाई जा रही हैं, उनसे यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि यह संकट खत्म हो जायेगा। शोषकों और शोषितों के बीच अंतर्विरोधों के तेज होने के साथ साथ, 60 की शताब्दी में कांग्रेस पार्टी में फूट तथा शोषकों के बीच बहुत से विभाजन हुये हैं। उस समय से आज तक सरमायदार वोट और बम के तरीके का इस्तेमाल करके, एक संकट से दूसरे संकट तक अपनी हुकूमत चला सके हैं।

हाल की दशाब्दियों के राजनीतिक तजुर्बे में कुछ मुख्य बातें शामिल हैः

- 1970 के दशक की शुरुआत में जन आंदोलन और गैर संसदीय विरोध
- 1975 मे राष्ट्रीय एमरजैंसी की घोषणा
- 1977–79 में "लोकतंत्र की पुनःस्थापना" का नाटक और 1980 में इंदिरा गांधी का सत्ता में वापस आना
- असम, पंजाब, आंध्र प्रदेश, इत्यादि में जनता के हकों की हिफ़ाज़त में जन संघर्ष
- देश की एकता और अखंडता की हिफ़ाज़त करने की आड़ में राजकीय आतंकवाद का बढ़ना
- 1984 में इंदिरा गांधी का कत्ल और सिखों का कत्लेआम
- राजीव गांधी का आधुनिकीकरण और राजकीय आतंकवाद व व्यक्तिगत आतंकवाद का बढ़ना
- 1991 में राजीव गांधी का कत्ल
- राव का उदारीकरण और निजीकरण कार्यक्रम और साथ ही साथ बड़े–बड़े घोटाले, साम्प्रदायिक हिंसा और राजनीति का अपराधीकरण, अयोध्या के हादसे और 1992–93 में मुसलमानों के खिलाफ़ आयोजित हिंसा

- उदारीकरण, निजीकरण, गैट व डब्ल्यू•टी•ओ• का बढ़ता विरोध

- 1996–97 में केन्द्र के वामपंथी गठबंधन का उत्थान व पतन और उसका सांझा न्यूनतम कार्यक्रम

यह स्पष्ट है कि हाल के दशकों में लोगों के संघर्षो के प्रति हिन्दोस्तानी सरमायदारों का जवाब राजकीय व व्यक्तिगत आतंकवाद के रूप में हिंसा और साम्प्रदायिक हिंसा छेड़ना ही रहा है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि लोगों को बहुत ही चौकन्ने रहना होगा ताकि सरमायदार उनके बढ़ते हुये प्रतिरोध को खून में न बहा दें।

बस्तीवाद से राजनीतिक आजादी पाने के बाद के पहले तीन दशकों में हिन्दोस्तानी पूंजीवाद का विकास नेहरूवी "समाज के समाजवादी नमूने" के ढांचे के अन्तर्गत हुआ। राजकीय क्षेत्रक ने भारी उद्योग और आधारभूत संरचना पर भारी पूंजी लगाया और जनसमुदाय से भारी कर अदा किये, ताकि बड़े औद्योगिक घरानों के लिये अधिकतम मुनाफे सुनिश्चित किये जा सकें। आयात और पूंजी लगाने पर लाइसेंस–परमिट द्वारा नियंत्रण की वजह से बड़े सरमायदारों को बाजार पर पूरी तरह हावी होने का मौका मिला, हिन्दोस्तानी और विदेशी प्रतियोगियों को सीमित रखने का मौका मिला। मुट्ठीभर अमीर और खास अधिकार वाले लोगों, बड़े सरमायदारों और उनके टट्टुओं की दौलत को बढ़ाने के लिये अधिकतम जनसमुदाय का खून चूसा गया।

80 के दशक तक इजारेदार पूंजीवादी विकास के नेहरूवी नमूने और तरीके में कोई दम नहीं बचा था। इसीलिये राजीव गांधी को अपना आधुनिकीकरण शुरु करना पड़ा, जिसे नरसिंह राव और मनमोहन सिंह ने अपने उदारीकरण और निजीकरण कार्यक्रम के जरिये और आगे बढ़ाया। अब यह बाजार अनुसार सुधार खुद ही संकट की एक वजह बन गया है, जब कि सरमायदारों का यह इरादा था कि इन सुधारों के सहारे वे संकट से बच निकलेंगे और संकट को लोगों पर लाद देंगे।

अधिक से अधिक लोग बहुत जल्दी यह समझ रहे हैं कि बाजार अनुसार सुधारों से सिर्फ कुछ गिने–चुने खास अधिकार वाले लोगों को ही फायदा हुआ है। 1991 में जब से नरसिंह राव ने यह सुधार कार्यक्रम छेड़ा था, तब से उपभोक्ता सामग्रियों की कीमतें वेतनों की तुलना में काफ़ी तेज गति से बढ़ गई हैं। औद्योगिक संगठित मजदूरों के

वेतनों की तुलना में भी, और खेत मजदूरों तथा असंगठित मजदूरों के वेतनों की तुलना में तो अवश्य ही कीमतें बहुत बढ़ गई हैं। पूरे हिन्दोस्तान के स्तर पर श्रम के असली वेतन घट गये हैं जब कि बड़े औद्योगिक घरानों के मुनाफे कई गुना बढ़ गये हैं। साथ ही साथ, जितनी नौकरियां पैदा की गई हैं, उससे कहीं ज्यादा नौकरियां खत्म कर दी गई हैं। सबसे बड़े इजारेदारों व बहुराष्ट्रिक कंपनियों द्वारा बाजार पर बढ़ता हुआ कब्जा, ब्याज के बढ़ते हुये दर, बैंकों में घोटाले और उधार में कटौती की वजह से सभी क्षेत्रकों के छोटे व मध्यम दर्जे के उत्पादकों की आर्थिक हालत पर बहुत दबाव पड़ा है। किसानों और छोटे उद्योगपतियों की तबाही बढ़ती जा रही है, जिसकी वजह से बेरोज़गारों की संख्या बढ़ रही है और पूंजीवादी सुधारों का विरोध भी बढ़ रहा है।

इस आर्थिक सुधार कार्यक्रम के खिलाफ़ विरोध बहुत गहरा तथा विस्तृत हो गया है। इसमें जनसमुदाय के अलग अलग हिस्से, मजदूर, किसान, महिलायें, आदिवासी, विस्थापित सम्प्रदायों के लोग, आदि सब शामिल हैं। कुछ बड़े उद्योगपति जो तब्दीली की गति से खतरा महसूस करते हैं, अपने मतलबों के लिये इस विरोध में शामिल हो रहे है, जिससे संकट और बढ़ रहा है।

आर्थिक हमले के साथ साथ, राजनीति का साम्प्रदायीकरण और अपराधीकरण भी चल रहा है, जिससे यह फिर से साबित होता है कि सरमायदार हिंसा और अपराध का इस्तेमाल किये बिना अपनी हुकूमत नहीं चला सकते हैं। मणिपुर और नागालैंड, कश्मीर और पंजाब में जनता के खिलाफ़ केन्द्रीय फौजी दलों की बर्बरतापूर्ण हिंसा "राष्ट्रीय एकता और अखंडता" की हिफ़ाज़त करने के नाम पर उचित ठहरायी जाती है। केन्द्र के निरंकुश शासन और राजकीय आतंकवाद के खिलाफ़ विरोध सभी सीमान्तर राज्यों और आंध्र प्रदेश जैसे दूसरे इलाकों में भी बहुत बढ़ गया है। पूरे हिन्दोस्तान में सरमायदारों के हमले के खिलाफ़ संघर्ष नजर आते हैं।

हिन्दोस्तान में बहुत सी पार्टियों का बनना व मौजूद होना इन प्रतिरोधी संघर्षो और हिन्दोस्तानी राज्य के समायोजन की नीति का नतीजा है।

बहु पार्टी व्यवस्था सरमायदारों के लिये तब अच्छी तरह काम करती है जब दो मुख्य पार्टियां या गठबंधन होते हैं, एक सत्ता में और एक विपक्ष में। जब एक बदनाम हो जाता है तो सरमायदार दूसरे को उसकी जगह पर बिठा देते हैं। अमरीका और ब्रिटेन

में बहुपार्टी व्यवस्था को ऐसे ही चलाया जाता है। हिन्दोस्तान के सरमायदार ऐसा फार्मूला बनाने में अब तक असमर्थ रहे हैं।

जब कि हिन्दोस्तान के सरमायदार मजदूर वर्ग और लोगों के संघर्षों को संसदीय व्यवस्था के साथ समझौता करवाकर सीमित रखने में कामयाब रहे हैं, तो इसके साथ ही साथ,व इसकी वजह से बहुत सी पार्टियां भी पैदा हो गई हैं, जिससे सरमायदारों के लिये बहु पार्टी व्यवस्था को स्थिरता दिलाना मुश्किल हो गया है। इसका अनिवार्य नतीजा यही हुआ है कि भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, साम्प्रदायिक और जातिवादी हिंसा बहुत बढ़ गये हैं। सरमायदारों की राजनीतिक सत्ता के सभी संस्थान–संसद, कैबिनेट, प्रधान मंत्री, चुनावी प्रक्रिया, संसदीय पार्टियां, न्यायतंत्र,पुलिस और नौकरशाही सब बदनाम हो गये हैं। सरमायदार राजनीतिक व्यवस्था की विश्वसनीयता को पुनः स्थापित करना चाहते हैं, इसलिये बड़े जोर शोर से राजनीति को "स्वच्छ" करने के प्रचार किये जा रहे हैं। तरह तरह के सिद्धान्त फैलाये जाते हैं कि कैसे चुनावी कानूनों में कुछ थोड़ी सी तब्दीलियां लाकर ये समस्यायें हल हो सकती हैं। साथ ही साथ, यह ध्यान दिया जाता है कि जो कुछ भी किया जाता है, उससे यही व्यवस्था और मजबूत हो जाये, कमजोर न हो। सरमायदार यह उम्मीद कर रहे हैं कि जल्दी ही वे एक "स्थिर सरकार" बना पायेंगे, जिससे उनकी विश्वसनीयता का संकट दूर हो जायेगा।

सरमायदारों के संकट में कम्युनिस्टों के लिये एक अच्छा वातावरण है जिसमें वे एक नई राजनीतिक व्यवस्था के निर्माण की मांग, नज़रिया व काम को आगे रख सकते हैं। कम्युनिस्ट इन हालातों में एक नई राज्य सत्ता के नमूने को पेश कर सकते हैं जो सम्राज्यवाद और हिन्दोस्तानी सरमायदारों के हमलों का मुकाबला करके हिन्दोस्तानी लोगों के हितों की हिफाजत में काम करेगी। वर्तमान हिन्दोस्तानी राज्य बस्तीवादी विरासत की हिफ़ाज़त करता है। यह राज्य विदेशी तकतों और हिन्दोस्तानी सरमायदारों के हिंसक इरादों से मजदूरों, किसानों और दबी–कुचली जनता के हितों की हिफ़ाज़त नहीं कर सकता। आजादी और प्रगति के लिये, प्रभुसत्ता की हिफ़ाज़त के लिये मजदूर किसान गठबंधन के आधार पर एक नई व्यवस्था बनानी पड़ेगी। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, इत्यादि के आदेश एशिया के विभिन्न देशें में किस तरह लागू किये जा रहे हैं, इसे ध्यान में रखते हुये, इस मुद्दे पर ज्यादा से ज्यादा बातचीत, विस्तार और आन्दोलन करने से हमें इसे समझने और सही रास्ता निकालने में मदद मिलेगी।

हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग को वर्तमान स्थिति को बचाये रखने से कोई फायदा नहीं है। दायेंपंथी, केन्द्रपंथी और वामपंथी सरमायदार गुटों में लोगों के बंटवारे से मजदूर वर्ग को कोई फायदा नहीं है। अलग अलग मोर्चों से हमें क्या मिलेगा, इसका मूल्यांकन करने के कोई मापदंड न होने के कारण मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोग एक या दूसरे सरमायदार मोर्चे के पीछे खिंच जाने के खतरे में हैं। 1998 और 1999 में संभावनायें काफी हद तक इस बात पर निर्भर होंगी कि कम्युनिस्ट इन हालातों में लोगों के सामने क्या कार्यक्रम रखेंगे और आन्दोलन अपने लिये क्या क्या मानदंड तय करेगा।

इंकलाबी विकल्प

इंकलाबी विकल्प को मजदूर वर्ग व मेहनतकशों के आन्दोलन से उभर कर आना पड़ेगा। कम्युनिस्टों को इसमें अगुवाई देनी होगी, ताकि मजदूर वर्ग खुद अपना लक्ष्य और उस लक्ष्य को हासिल करने के लिये कार्यक्रम तय कर सके।

इस अवधि में पहल सरमायदारों के हाथों में है। मजदूर वर्ग का फौरी मकसद है इस हालत को बदल देना, यानि मेहनतकश, दबीकुचली जनता को अपने हाथों में पहल लेने में कामयाब बनाना, अपने संघर्षों का रूख बदल देना ताकि हम सिर्फ सरमायदारों के हमलों के जवाब में ही न लड़ें बल्कि खुद अपना आन्दोलन चलायें। यह जरूरी है कि हम ऐसी मांगे रखें जो सरमायदारों के संकट को और गंभीर बना देंगी जब सरमायदार इन मांगों को पूरा नहीं कर पायेंगे और सरमायदारों की हुकूमत की मनमानी, अस्पष्टता, अनुचितता और निरंकुशता का और पर्दाफाश हो जायेगा। ऐसा करने पर मजदूर वर्ग जनता को जागरूक करने और हालत को बदलने में कामयाब होगा।

मजदूर वर्ग को यह ऐलान करना चाहिये कि वह एक ऐसी अर्थव्यवस्था की स्थापना करेगा जो सभी की जरूरतें पूरी करेगी और इसके लिये अर्थव्यवस्था को लगातार विस्तृत करेगीं। यह उस उतार चढ़ाव के चक्र से मुक्त होगी, जिसमें वर्तमान व्यवस्था फंसी हुई है। इसे कामयाब करने के लिये अर्थव्यवस्था की वर्तमान दिशा को बदलना होगा, मजदूर वर्ग और बाकी समाज का क्या होगा यह सोचे बिना बड़े उद्योगपतियों के अधिकतम मुनाफे सुनिश्चित करने की दिशा बदलनी पड़ेगी। इंसानों और उत्पादक संसाधनों पर लगातार पूंजी लगाना, यह उत्पादन की दिशा होनी चाहिये। इस लक्ष्य

और नजरिये को दिमाग में रखते हुये, मजदूर वर्ग को बजट की नीति पर सरमायदारों को चुनौती देनी चाहिये। मजदूर वर्ग को इस झूठ का खंडन करना चाहिये कि इंसानों की जरूरतों को पूरा करने के लिये कोई पैसा नहीं है। बैंकों के कर्ज चुकाने पर रोक, फौजी खरीदारी पर रोक, आदि ऐसी मांगे उठाई जानी चाहिये, क्योंकि ये दो क्षेत्र हैं जिनमें जनता के पैसों का सबसे अनुत्पादक तरीके से इस्तेमाल होता है। इससे जो पैसा बचता है, उसे इंसानों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में लगाना चाहिये। ऐसा क्यों है कि स्वास्थ्य या शिक्षा पर खर्चे में कटौती इतनी आसानी से की जा सकती है परन्तु कर्ज चुकाने में थोड़ी सी देर नहीं हो सकती जब तक हालत सुधर न जाये? 1990 में जब ऐसा कदम जरूरी था, तो हिन्दोस्तानी शासकों ने कर्ज चुकाने में देर करने के बजाय, देश के सोना को लंदन भेज दिया था। फ़ौजी खरीदारी विक्रेता देशों के लिये बहुत मुनाफेदार धंधा है, और ऐसी खरीदारी हिन्दोस्तानी सरमायदारों की भौगोलिक राजनीति का अंजाम है, क्योंकि हिन्दोस्तान के सरमायदार अपने प्रसारवादी मंसूबों को पूरा करना चाहते हैं। अब यह वक्त आ गया है कि मजदूर वर्ग अपना आर्थिक कार्यक्रम पेश करने के सिलसिले में इन मुद्दों पर बातचीत करने में जनता को अगुवाई दे।

सरमायदार यह ऐलान करते हैं कि वे उत्पादक काम में लगाने के लिये काले धन को निकालना चाहते हैं। वे वी•डी•आई•एस• (स्वंय रोजगार घोषणा स्कीम) को बहुत बड़ी सफलता बता रहे हैं, हालांकि इस स्कीम के द्वारा शोषकों और भ्रष्ट अफसरो ने जनता से चुराये गये धन का बहुत छोटा सा हिस्सा ही बाहर निकाला है। मजदूर वर्ग को यह मांग करनी चाहिये कि पूरा काला धन छीन लिया जाना चाहिये, इसके बदले में कोई राहत दिये बिना। मुद्रा को बेकीमत करने के तरीकों के अलावा, काला धन सम्बन्धी संम्पत्तियों को छीन लेने का काम संसद द्वारा भी किया जा सकता है, जैसे कि वी•डी•आई•एस• को भी संसद के अध्यादेश के द्वारा ही लागू किया जा सकता है।

सरमायदारों द्वारा किये जा रहे आर्थिक सुधारों का मकसद है अतिरिक्त मूल्य के नियम के लागू होने की गुंजाइश को बढ़ाना। मजदूर वर्ग को सिर्फ सुधारों का विरोध ही नहीं करना चाहिये, बल्कि ऐसे सुधारों की मांग भी करनी चाहिये जो अतिरिक्त मूल्य के नियम के लागू होने की गुंजाइश को कम कर दें। मिसाल के तौर पर, विदेशी व्यापार और घरेलू व्यापार से बिचौलों को मुनाफा कमाने की इज़ाज़त क्यों दी जाती है? इस

क्षेत्र से सट्टेबाजी और बनावटी महंगाई को दूर करना पड़ेगा। मजदूर वर्ग को यह मांग करनी पड़ेगी कि विदेशी व्यापार और घरेलू व्यापार, दोनों का राष्ट्रीकरण होना चाहिये, और इससे निकलने वाला पैसा जनता की खुशहाली पर खर्च किया जाना चाहिये।

अगर मजदूरों और किसानों को सत्ता में आना है, खुद अपने फैसले लेना है, तो **राजनीतिक प्रक्रिया का नवीकरण** करना जरूरी है। जिंदगी का तजुर्बा यही दिखाता है, और मजदूर वर्ग व मेहनतकश जनता इस बात से अच्छी तरह वाकिफ़ हैं, कि संसद में बैठी अमीरों व मध्यम वर्गों की पार्टियां हमारे हित में फैसले नहीं लेते हैं और न ही ले सकते हैं। मौजूदे चुनावी कानूनों के अनुसार, चुनावी प्रक्रिया में सभी स्तरों पर उम्मीदवारों का चयन करने में पार्टी के अध्यक्ष का फैसला आखिरी फैसला है। इसकी वजह से उम्मीदवारों को चुनने में जनता की कोई भूमिका नहीं होती, उनका हक सिर्फ वोट डालने तक ही सीमित होता है। सरमायदार, पार्टियों के नेताओं के साथ मिलकर, भ्रष्टाचार करते हैं और षड्यन्त्र रचते हैं और अपनी पसंद की सरकार थोप देते हैं, जिसे वोटों द्वारा कानूनी मान्यता दी जाती है। मजदूर वर्ग को इस प्रक्रिया को खत्म करने के लिये जनता को जागरूक करना चाहिये। मजदूर वर्ग को यह मांग करनी चाहिये कि चुनाव के लिये खड़े होने वाले उम्मीदवारों का चयन पार्टियों और पार्टी अध्यक्षों के हाथों से ले लिया जाये और जनता के हाथों में सौंपा जाए। पार्टी अध्यक्ष के घर के सामने उम्मीदवारों का झुंड इकट्ठा होना, उम्मीदवारों के चयन से पहले पर्दे के पीछे दांवपेच और पैसों की लेनदेन तब खत्म हो सकती है। ऐसा कदम लेने पर नये किस्म के जन संगठन बन सकते हैं, जिनमें मजदूर, किसान, महिलायें व नौजवान अपने बराबर के लोगों के साथ राजनीतिक मामलों में हिस्सा ले सकते हैं और इस एकता से एक नई सत्ता को पैदा कर सकते हैं।

यह मांग–कि उम्मीदवारों का चयन जनता द्वारा होना चाहिये–जनता की एकता बनाने और लोकतंत्र को अपनी वर्तमान सीमाओं से पार विस्तृत करने का आधार बन सकता है। ऐसे मुद्दे, मसलन "अपराधी इतिहास वाले लोगों को चुनाव में खड़ा होने से रोकना चाहिये," इत्यादि तब तक सिर्फ विचार ही रहेंगे जब तक जनता को उम्मीदवारों का चयन करने का हक नहीं मिलेगा। इसी प्रकार, अगर किसी व्यक्ति को वहीं वोट डालना पड़ता है जहां वह पंजीकृत है, तो किसी दूसरे चुनाव क्षेत्र का व्यक्ति कैसे पार्टी अध्यक्ष के फैसले से, उन पर उम्मीदवार के रूप में थोप दिया जाता है? अब वक्त आ गया है कि लोग खुद यह फैसला लें कि असेंब्ली और संसद में कौन उनका

प्रतिनिधि होगा, न कि पार्टी व पार्टी अध्यक्ष, जो जनता का सिर्फ एक मुट्ठीभर हिस्सा ही है। मजदूर वर्ग की यह ऐतिहासिक जिम्मेदारी है कि वह इस मांग को उठाये, ताकि जनता चुनने और चुने जाने में कामयाब हो। इस समय चुने जाने का हक सिर्फ राजनीतिक पार्टियों और उन्हें पैसे देने वालों का ही है। यह जरूरी है कि मजदूर वर्ग इस हक को जीतने के लिये कोई नई प्रक्रिया बनाए।

किसी भी राजनीतिक पार्टी व दल द्वारा प्रस्तावित किसी भी राजनीतिक सुधार को परखने का एक ही तरीका हैः क्या इस सुधार के जरिये राजनीतिक प्रक्रिया में मजदूरों और किसानों के हक बढ़ेंगे और संसदीय पार्टियों की इजारेदारी कम होगी, या क्या इसका उल्टा ही होगा? जिस प्रकार आजकल चुनाव आयोजित किये जाते हैं, वह सरमायदारों के वर्ग संघर्ष का एक तरीका जैसा है, जहां सरमायदार अपने कार्यक्रम, अपने इरादों, अपने संगठन आदि का प्रचार करते हैं और सभी से कहते हैं कि वे इसी पर चर्चा करें और सोचें। मजदूर वर्ग को इस मौके का इस्तेमाल करके अपने इरादों, अपने कार्यक्रम, अपने संगठन और सत्ता में आने के अपने तरीकों पर चर्चा चलाने के लिये लोगों को अगुवाई देना चाहिये। अगर कम्युनिस्ट इस काम में सबसे आगे न हों, तो मजदूर वर्ग और मेहनतकश सरमायदारों के इरादों और उनके संगठनों की मायाजाल से बच नहीं सकेंगे; हम सत्ता से वंचित रह जायेंगे। सरमायदार चुनावों के दौरान और दूसरे समय पर भी, अधिक से अधिक संख्या में लोगों को लामबंद करते हैं और धोखाधड़ी का इस्तेमाल करते हैं। मजदूर वर्ग को अपने इरादे हासिल करने के लिये चुनावों के दौरान और दूसरे समय पर भी अधिक से अधिक मात्रा में लोगों को राजनीतिक तौर पर लामबंद करना चाहिये और इस धोखाधड़ी का पर्दाफाश करना चाहिये।

राजकीय आतंकवाद को रोकना और बिल्कुल रद्द कर देना एक फौरी मांग है जिसे मजदूर वर्ग और मेहनतकशों को उठाना चाहिये। मानव अधिकारों, लोकतांत्रिक अधिकारों और राष्ट्रीय अधिकारों का आन्दोलन केन्द्रीय फौजी दलों के अत्याचार का शिकार है। इस अत्याचार को "राष्ट्रीय एकता व अखंडता" की हिफ़ाज़त, "आतंकवाद विरोध","कानून और व्यवस्था बनाए रखना", आदि के नारों से उचित ठहराया जाता है। राजकीय आतंकवाद और व्यक्तिगत आतंकवाद, दोनों का विरोध करना जरूरी है। सभी काले कानूनों को हटा दिया जाना चाहिये, जो इनके शिकार हुये उन्हें राहत मिलनी चाहिये और लोगों पर आतंक छेड़ने वालों की खुल्लमखुल्ला मुकदमा व सज़ा

होनी चाहिये। राजनीतिक मांग करने वालों पर "कानून व व्यवस्था" के बहाने बल प्रयोग का कड़ा विरोध होना चाहिये। मजदूर वर्ग को यह मांग करनी चाहिये कि राजनीतिक मांगें पेश करने के लिये सभी स्तरों पर साधन होने चाहिये, संसद में और बाहर भी।

मजदूर वर्ग की अगुवाई में इंकलाबी मोर्चे का एक और बुनियादी सिद्धान्त यह है कि हरेक इलाके के लोगों को अपना भविष्य खुद निर्धारित करने का हक है। मजदूर वर्ग और मेहनतकशों को लोगों के बीच झगड़ों और राष्ट्रीय अत्याचार से कोई फायदा नहीं है। आदिवासियों को उन प्रशासन के ढांचों में शामिल करके, जहां शासन चलाने में उनकी कोई भूमिका नहीं हो सकती है, उन पर अत्याचार किया जाता है। इससे मजदूर वर्ग और मेहनतकशों को कोई फायदा नहीं है। सिर्फ सरमायदारों और शासक दलों को ही इन चीजों से फायदा है। मजदूर वर्ग हिन्दोस्तान के किसी भी व्यक्ति, राष्ट्र, राष्ट्रीयता या अल्पसंख्यक की पहचान, इज़्ज़त व हकों के उल्लंघन का विरोध करता है। मजदूर वर्ग हिन्दोस्तानी संघ को पारस्परिक हित के आधार पर लोगों के स्वैच्छिक संघ के रूप में पुनःस्थापित करना चाहता है।

हिन्दोस्तान की विशालता और बहुराष्ट्रिक गठन को समझते हुये, हरेक इलाके के लोगों के अपनी राष्ट्रीय समानता के आधार पर खुद अपना भविष्य निर्धारित करने के हक व अपनी पहचान दिये बिना, और क्या लोगों को सत्ता में लाने का सिद्धान्त हो सकता है? लेकिन क्या यह गिने चुने इलाकों में किया जा सकता है, हिन्दोस्तान की बहुसंख्या को शामिल किये बिना, जब कि आज वे सभी दिल्ली के केन्द्र की हुकूमत के अत्याचार का सामना करते हैं? कोई भी इलाका अगर आजाद हो जाता है, तो उसे वर्तमान सत्ता और विश्व साम्राज्यवाद के हमलों का सामना करना पड़ेगा। दूसरे मित्रतापूर्ण लोगों के साथ गठबंधन बनाकर ही वह अपनी आजादी की हिफ़ाज़त कर सकता है। मजदूर वर्ग को पूरे हिन्दोस्तान की जनता को ऐसा अंतर्राष्ट्रीयतावादी नज़रिया दिलाना होगा, जो स्थानीय तौर पर या देश भर में उसकी विजय की पक्की गारंटी दे सकता है। लोगों की आजादी के लिये और क्या अच्छी संभावना हो सकती है, सभी लोगों की आजादी की तैयारी करने के अलावा? आजादी के बाद जो भी नई व्यवस्था बनती है, उसमें उन्हें पूरा हक होगा कि वे शामिल हों या न हों। दूसरे शब्दों में, हिन्दोस्तान की जनता को तब तक प्रभुसत्ता नहीं मिल सकती, जब तक उसके सभी खंडो को प्रभुसत्ता नहीं मिलेगी।

हिन्दोस्तान के राजनीतिक तजुर्बे में हकों और कर्तव्यों को एक सम्पूर्ण व्यवस्था के रूप में समझा गया है, अलग अलग अंशों में नहीं। इतिहास की हर अवधि में कानूनों का यही आधार रहा है, बहुत प्राचीन काल में जब छोटे छोटे राज्य होते थे और महाभारत, अर्थशास्त्र तथा भक्ति लहर के समय भी। ऐसी ही समझदारी और नज़रिया संघर्ष के हर दौर पर विकसित हुआ, ब्राह्मणवादी जाति प्रथा के खिलाफ़, निरंकुश राजाओं के अत्याचार के खिलाफ़, गैर इंसाफ के खिलाफ़। इस समय इन हिन्दोस्तानी विचारधाराओं को आधुनिक रूप देना होगा, ताकि जन समूह सभी हकों और कर्तव्यों का आधार बन जाये। यह वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ़ संघर्ष करके ही मुमकिन हो सकता है क्योंकि इस व्यवस्था में कुछ लोगों को अधिक से अधिक मुनाफे बनाने का हक है और बाकी समाज के प्रति उनका कोई कर्तव्य नहीं है। हरेक व्यक्ति अपनी देखभाल खुद करे, ऐसी सोच हिन्दोस्तानियों के लिये एक ग़ैर सोच है। इस उपमहाद्वीप के लोगों ने हमेशा सम्पूर्ण जनसमुदाय की खुशहाली में ही हरेक की खुशहाली को पाया है। हमारे समाज में जमीन व दूसरे संसाधनों की सांझी मिलकियत होती थीं बस्तीवादी हुकूमत के दौरान जब पूंजीवादी निजी सम्पत्ति और पूंजीवादी निजी मुनाफे को उत्पादन का मकसद बनाया गया, तब यह हालत बदल गई। राजनीतिक सिद्धान्तो का आधुनिकीकरण, हमारी अपनी हालातों और दुनिया की हालतों से उत्पन्न होने वाली फलसफ़ा व विचारधारा का आधुनिकीकरण हर क्षेत्र में हिन्दोस्तान के नवीकरण के लिये एक स्पष्ट और सब तरफा नजरिया बनाने के लिये जरूरी है। विचारधारा में यूरोकेन्द्रीयवाद और राजनीति में सोशल डेमोक्रेसी और सामाजिक शोवींवाद से नाता तोड़ना जरूरी है।

विचारधारात्मक संघर्ष और कम्युनिस्ट एकता

कम्युनिस्ट आन्दोलन में जो फूट पड़ी है, उस पर काबू पाकर ही हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों की एकता फिर से बन सकती है। यह फूट तभी खत्म होगा जब हम उन रवैयों का पर्दाफाश करेंगे जो मजदूर वर्ग के लिये खतरनाक हैं और दुश्मन वर्ग के हित में हैं, तथा ऐसे रवैयों को अलग कर देंगे। यह कहना कि इस समय पूंजीवादी सुधारों का कोई विकल्प नहीं है, एक ऐसा रवैया हैं।"साम्प्रदायिक खतरे" को हटाने या "हिन्दोस्तान की एकता व अखंडता" की हिफ़ाज़त करने के बहाने वर्तमान व्यवस्था को बचाये रखना भी एक और ऐसा रवैया है।

चुनावों में फिर से यह सवाल पैदा होता है कि इन हालातों में कम्युनिस्टों को क्या करना चाहिये। क्या उन्हें सरमायदारों के तीसरे मोर्चे में शामिल हो जाना चाहिये और लोगों से इसके लिये समर्थन मांगना चाहिये, यह कहकर कि यह"कम बुरा" है? या क्या उन्हें मजदूर वर्ग और मेहनतकशों के इंकलाबी विकल्प को पैदा करने की चुनौती उठा लेनी चाहिये और इस इंकलाबी मोर्चे में वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ सभी लोगों को शामिल होने व समर्थन देने का बुलावा देना चाहिये?

तीसरे मोर्चे में शामिल होने से हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग व मेहनतकशों के लिये अपना लक्ष्य निर्धारित करने का काम और आसान नहीं हो जाता है। यह योजना बनाये बगैर अपनाई गई नीति है। और विश्लेषण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि इससे वर्तमान व्यवस्था को ही मदद मिलेगी। दूसरा रास्ता, यानि मजदूरों और मेहनतकशों का मोर्चा बनाना, इससे ऐसे हालात पैदा हो सकेंगे जिनसे मेहनतकशों को इस संकटग्रस्त व्यवस्था को खत्म करने और अपनी जरूरतों के अनुसार एक नई राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था बनाने का कार्यक्रम तैयार करने का मौका मिलेगा। हाल के तजुर्बों और ऊपर बताई गई बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सरमायदारों की अगुवाई में एक राजनीतिक मोर्चा, जिसमें सरमायदारों के ही कार्यक्रम को लागू करने के लिये कुछ कम्युनिस्टों को भी शामिल किया गया है (कांग्रेस–इ बिना कांग्रेस–इ नीति), यह मजदूर वर्ग और मेहनतकशों को कोई मदद नहीं दे सकता। मजदूर वर्ग की अगुवाई में सभी इंकलाबी ताकतों और सभी मेहनतकशों का राजनीतिक मोर्चा ही मजदूर वर्ग के कार्यक्रम को मदद दे सकता है।

मा•क•पा•, भा•क•पा•, आर•एस•पी• और फारवर्ड ब्लाक ने हाल ही में एक सांझा चुनाव कार्यक्रम पेश किया है। हमारी पार्टी और हमारी जैसी दूसरी कम्युनिस्ट पार्टियों के काम के जरिये आम जनता में यह जागरूकता फैल रही है कि कम्युनिस्टों का काम सरमायदारी गठबंधन बनाना नहीं बल्कि मजदूर वर्ग को अपना कार्यक्रम बनाने में अगुवाई देना और ऐसे कार्यक्रम के इर्द जनता का इंकलाबी मोर्चा बनाना है। इसके जवाब में यह सांझा कार्यक्रम रखा गया है। खबरों के अनुसार, 16 जनवरी को निकाले गये इन पार्टियों के संयुक्त घोषणापत्र में लोगों से यह वायदा किया गया है कि सत्ता में आने पर वे धर्म को राजनीति से अलग कर देंगे, विकास के साथ साथ बराबरी की गारंटी देने वाली आर्थिक नीतियों को लागू करेंगे और भ्रष्टाचार रहित जवाबदेही सरकार बनायेंगे। घोषणापत्र में यह वायदा भी है कि संयुक्त मोर्चे को मजबूत किया

जायेगा और राष्ट्रीय एकता की हिफ़ाज़त की जायेगी।

इन पार्टियों का संयुक्त घोषणापत्र कम्युनिस्ट आन्दोलन की इस मांग के जवाब में है कि कम्युनिस्टों को एकजुट हो जाना चाहिये, ऐसा बताया गया है। यह हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग के हितों के खिलाफ़ है कि पूरे कम्युनिस्ट आन्दोलन को शामिल किये बिना, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन के नाम पर सिर्फ चार पार्टियों ने इस प्रकार घोषणा करने का फैसला किया। अगर हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को मजदूरों व दूसरे मेहनतकशों का इंकलाबी मोर्चा बनाना है, तो चुनावों और चुनावी घोषणापत्रों को इस काम में मदद करनी चाहिये। वर्तमान हालातों में मजदूर वर्ग का क्या कार्यक्रम होना चाहिये जिसके आधार पर इंकलाबी मोर्चा बनाया जा सकता है, इसके बारे में सभी पार्टियों के अंदर और कम्युनिस्टों व जागरूक मजदूरों के बीच अधिक से अधिक चर्चा होनी चाहिये। ऐसा घोषणापत्र जो इस जरूरत को पूरा नहीं करता बल्कि मनमानी से थोपा जाता है, यह जागरूक मजदूरों के बीच गलत फ़हमी पैदा कर सकता है कि ये पार्टियां मजदूर वर्ग की समस्याओं के बारे में बात कर रही हैं। इसके अलावा, इस घोषणापत्र में कोई भी ऐसी बात नहीं है जो हिन्दोस्तानी सरमायदारों की मांगों से अलग है।

मजदूर वर्ग के लिये किस प्रकार का मोर्चा और किस प्रकार का कार्यक्रम होना चाहिये, इस प्रकार के सवालों पर मजदूर वर्ग व मेहनतकशों के सामने सक्रिय वाद विवाद होनी चाहिये। इस समय, इन सवालों पर सभी कम्युनिस्टों को बार बार लोगों के सामने अपने विचार रखने चाहिये। किस प्रकार की पार्टी और किस प्रकार का राजनीतिक मोर्चा ? हमें अपने विचार साफ साफ रखने चाहिये और सभी कम्युनिस्टों को आह्वान देना चाहिये कि वे भी ऐसा करें। जो अपने आप को कम्युनिस्ट कहलाते हैं परन्तु इस वाद विवाद में शामिल होने से इंकार करते हैं, उन पर हमें दबाव डालते रहना चाहिये। हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी कम्युनिस्टों के बीच खुलेआम चर्चा व वाद विवाद चाहती है।

अक्सर ऐसे लोग, संगठन और दल मिलते हैं जो "लोक सत्ता" स्थापित करने के लिये काम करने का दावा करते हैं। परन्तु अक्सर इसे एक प्रचार का नारा बना दिया जाता है। हिन्दोस्तान का संविधान भी अपने प्राक्कथन में कहता है कि "हम जनता ने" अपने आप को यह बुनियादी कानून दिलवाया है। लेकिन यह "हम" असलियत में कौन है,

इस बात को छिपाकर रखा जाता है। असलियत तो यह है कि हिन्दोस्तान के बड़े सरमायदारों और उनके मित्रों ने आज के समाज में बुनियादी कानून बना रखा है और उसी के अनुसार राज करते हैं। जब सरमायदार और उनके नुमायंदे "हम जनता" कहते हैं, उनका मतलब है पूंजीपतियों और जमीन्दारों से, जिन लोगों के पास जायदाद और ऊंचा सामाजिक स्तर है। उनका मतलब मजदूर, किसान और मध्यम वर्गीय जनसमुदाय से नहीं है। इन वंचित वर्गों को सत्ता में लाने के लिये सत्ता के रूप व मूलत्त्व का विस्तार करना होगा। हम यह जानते हैं कि सत्ता वह साधन है जिसके सहारे इंसान वर्तमान हालतों में तब्दीली ला सकता है। मजदूरों, किसानों और मध्यम वर्गो को कैसे संगठित होना चाहिये ताकि वे समाज के स्तर पर, सामूहिक स्तर पर और व्यक्तिगत स्तर पर अपनी जिंदगी बदल सकते हैं? इस सत्ता की उन ताकतों से हिफ़ाज़त कैसे की जाये, जिनके पास आज सत्ता है और जो इस सत्ता को अपने पास रखने के लिये कानून, नौकरशाही और कानून लागू कराने वाली एजेंसियों का इस्तेमाल करते हैं? "लोक सत्ता" स्थापित करने से पहले मजदूर वर्ग और मेहनतकशों के सामने इन सवालों पर पूरी बातचीत होनी चाहिये।

कम्युनिस्ट आन्दोलन के अंदर कुछ और भी ऐसी प्रवृत्तियां हैं जिन्हें इसी प्रकार हल करना होगा। "वामपंथी व लोकतांत्रिक" मोर्चा, मध्यमवर्ती तथा राज्यों के सरमायदारों की पार्टियों के बीच ऊपर से एकता, इत्यादि के बारे में बहुत चर्चा चल रही है। मजदूर वर्ग व मेहनतकशों को एकजुट करने के संदर्भ में इन सभी सवालों पर विस्तार करना होगा। ऐसा न करने पर मजदूर वर्ग की राजनीति विकसित नहीं हो पायेगी, मजदूरों और किसानों को यह राजनीति बनाने की प्रक्रिया से बाहर रखा जायेगा। वर्तमान स्थिति, जिसमें मजदूर और किसान सरमायदार राजनीति की पूंछ बने हुये हैं, चलती रहेगीं यह बेहद जरूरी है कि कम्युनिस्ट मजदूर वर्ग और उसके मित्र, मेहनतकश किसानों के हितों में काम करें व उनकी हिमायत करें, और मध्यम वर्ग को यह आह्वान दे कि वे सरमायदारों के संयुक्त मोर्चे के बजाय, मजदूरों और किसानों के संयुक्त मोर्चे के लिये काम करें।

निष्कर्ष

सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के सामने यह चुनौती है कि कैसे उस रुकावट को दूर करें जो मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट आन्दोलन के रास्ते में खड़ी हैं। हिन्दोस्तान की

प्रगति के लिये हिन्दोस्तान की जनता को एक ऐसा कार्यक्रम अपनाना होगा जिससे वे पूंजीवाद, सामन्तवाद व बस्तीवाद के अवशेषों और साम्राज्यवादी जकड़ को उखाड़ फेंक सकेंगे। हमें अपने आप को सत्ता दिलाने का कार्यक्रम अपनाना होगा, प्रभुसत्ता को संसद से निकालकर अपने हाथों में लेना होगा, और राजनीतिक प्रक्रिया का नवीकरण करके ऐसा करना होगा।

इस आन्दोलन में मजदूर वर्ग को सभी मेहनतकशों के अगुवा बतौर एक ऐतिहासिक भूमिका निभानी होगी। मजदूर वर्ग को अपने इरादे स्पष्ट रूप से पेश करना होगा और अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी निभानी पड़ेगी। ऐसा तभी होगा जब मजदूर वर्ग का आन्दोलन जागरूक और संगठित होगा और वह अपनी अगुवा पार्टी के नेतृत्व में काम करेगा।

जब तक मजदूर वर्ग एक अगुवा पार्टी के नेतृत्व में नहीं होगा, तब तक वह न तो दूसरे दबे कुचले लोगों को अगुवाई दे पायेगा, न ही वह अपना लक्ष्य तय कर पायेगा। वह अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी नहीं निभा पायेगा। एक अगुवा पार्टी बनाना सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों का काम है। मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट आन्दोलन के रास्ते में रुकावट–यानि सोशल डेमोक्रेसी के साथ समझौता–को हटाना हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता को पुनःस्थापित करने का काम है। इस काम के जरिये मजदूर वर्ग आन्दोलन अपने इरादों सहित आगे बढ़ सकेगा, जिससे सम्पूर्ण जनसमुदाय हिन्दोस्तानी समाज की तब्दीली के लिये अपना कार्यक्रम बनाने में कामयाब होगा।

हमारी पार्टी के काम वही हैं जो सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के हैं। सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के संघर्ष के आधार पर ही विजय हासिल होगी। हमारी पार्टी इसे कामयाब करने के लिये सब कुछ करेगी। हम इसी आधार पर अपनी तात्कालिक योजना बनायेंगे।

1998 के साल को वह साल बनाना होगा जब हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन सोशल डेमाक्रेसी के साथ समझौता करने वालों को हराने की योजना अपनायेगा।

भाग २

हिन्दोस्तान का कम्युनिस्ट आन्दोलन-हालात एवं सम्भावनायें

परिचय

इस समय, सरमायदार एक सब–तरफा संकट में फंसे हुए हैं, और उनकी विश्वसनीयता का संकट सबसे गंभीर है। लेकिन हिन्दोस्तान का मजदूर वर्ग अपनी दूरदर्शिता और अपने कार्यक्रम को आगे रखकर हिन्दोस्तानी लोगों को समाज के परिवर्तन के लिये लामबंद करने में असमर्थ है। यह इसलिये कि हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन अपनी श्रेणियों में एकता न होने के कारण मजदूर वर्ग की अगुवाई नहीं कर पाता है। सभी कम्युनिस्टों को एक आम कार्यक्रम के अनुसार सोचना व काम करना चाहिये। लेकिन वे मजदूर वर्ग को अलग–अलग व विपरीत संदेशा भेज रहे हैं और उसे अलग–अलग दिशाओं में खींच रहे हैं। मजदूर वर्ग राजनीति से अलग रह गया है और वह वर्तमान संकटावस्था में क्रान्ति और समाजवाद की विजय के लिये वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाने में असमर्थ है।

इस समय, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन में बहुत सारी पार्टियां व गुट हैं, जिनकी राजनीतिक व विचारधारात्मक प्रवृत्तियां अलग–अलग हैं। एक ओर तो वे हैं जो तीसरे मोर्चे को मजबूत करने और मौजूदा व्यवस्था को बनाये रखने के लिये काम कर रहे हैं। दूसरी ओर वे हैं जो मजदूर वर्ग के नेतृत्व में दबे कुचले मेहनतकशों का क्रान्तिकारी मोर्चा बनाने के लिये काम कर रहे हैं, ताकि राजनीतिक प्रक्रिया का पुनर्गठन हो और क्रान्तिकारी तब्दीलियों के लिये रास्ता खुल जाये। संसदीय वामपंथ–सी•पी•आई•, सी•पी•एम•, फारवर्ड ब्लाक और आर•एस•पी•–पहली प्रवृत्ति में शामिल है और सी•जी•पी•आई• दूसरी प्रवृत्ति में। बीच में कई और प्रवृत्तियां हैं, जिनमें कई लोग हैं जो तीसरे मोर्चे का विरोध करने का दिखावा करते हैं लेकिन अपने कार्यों में वे तीसरे मोर्चे के साथ मिल जाते हैं। संयुक्त कम्युनिस्ट पार्टी और मजदूरों व मेहनतकशों के क्रान्तिकारी मोर्चे को बनाने के काम में मुख्य रोडा है मौजूदा स्थिति के साथ समझौता करने का राजनीतिक विचार। कहा जाता है कि इस समय लोगों के पास और कोई चारा नहीं है, इसके सिवाय कि वे "कम खतरे" के रूप में तीसरे मोर्चे को स्वीकार कर लें।

हमें कई सैद्धांतिक, विचारधारात्मक व कार्यकारी सवालों का समाधान निकालना होगा, ताकि मौजूदा भ्रम की स्थिति खत्म हो। इन सवालों में हैं–हिन्दोस्तान में क्रान्ति का चरण, संघर्ष के तरीके (संसदीय संघर्ष व हथियारबंद संघर्ष), हिन्दोस्तानी सरमायदारी का चरित्र, इत्यादि। हमारी पार्टी की राय है कि ऐसे सवालों को सैद्धांन्तिक व विचारधारात्मक रूप से उठाना चाहिये। सभी कम्युनिस्टों को इन सवालों की गहराई में जाने तथा आपसी विचार–विमर्श करने में अपनी ताकतें लगानी चाहिये, बातचीत को बढ़ाने के लिये व्यावहारिक कदम उठाने चाहिये। बातचीत लगातार चालू रहनी चाहिये, और जो भी व्यक्ति अपने–आप को कम्युनिस्ट कहता है, उसके प्रति धैर्य व समझदारी सहित व्यवहार करना चाहिये।

पिछले पचास वर्ष से, हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग को क्रान्ति के रास्ते से हटाने के लिये हिन्दोस्तानी सरमायदार का खास विचारधारात्मक व राजनैतिक हथियार रहा है वर्ग–सहयोग का प्रचार। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन में फूट पड़ने का अभिशाप, और उसकी एकता की पुनःस्थापना में मुख्य रोड़ा, इस वर्ग–सहयोग के विचारधारात्मक–राजनैतिक रवैयो के साथ समझौता करने की वजह से पैदा होते हैं। हमारी पार्टी के विचार में, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन तभी एकजुट हो सकेगा जब वह मार्क्सवाद–लेनिनवाद की हिफ़ाजत करेगा तथा सोशल डेमोक्रेसी नामक वर्ग–सहयोगी विचारधारात्मक व राजनीतिक धारा से समझौता करने के रवैये से अपने–आप को मुक्त करेगा। आन्दोलन से इस बीमारी को दूर करने के साधन हैं आम कार्यदिशा की ओर बढ़ते हुए, वर्ग–सहयोगियों के खिलाफ विचारधारात्मक व विवादात्मक संघर्ष जारी रखना, हिन्दोस्तान की मुक्ति के सिद्धान्त का आधुनिकीकरण करना, तथा मजदूर वर्ग के नेतृत्व में लोगों का क्रान्तिकारी मोर्चा बनाना।

कम्युनिस्ट और राजसत्ता

क्या यह उचित है कि कम्युनिस्ट केन्द्र और राज्यों में इस समय पूंजीवादी संकट के सबसे अच्छे प्रबंधकों के रूप में अपने आप को हिन्दोस्तान के शासक वर्गो के सामने पेश करें? यह सवाल कम्युनिस्ट और मजदूर वर्ग आन्दोलन में उठा है। संयुक्त मोर्चा सरकार में भा•क•पा• का हिस्सा लेना और संयुक्त मोर्चा स्टीयरिंग कमेटी में मा•क•पा• का हिस्सा लेना और संसदीय वामपंथ के नेताओं का वर्तमान प्रचार कि मजदूर वर्ग और लोग फिर से तीसरे मोर्चे पर विश्वास रखें, इन सब की वजह से यह सवाल

सरमायदार समाचार के माध्यम में भी आगे आया है।

कम्युस्टिों की परिभाषा यह है कि वे पूंजीवाद से समाजवाद और कम्युनिज़्म तक समाज की तब्दीली के लिये लड़ते हैं। वे हर प्रकार के शोषण से मेहनतकशों के उद्धार के लिये लड़ते हैं। उनका उद्देश्य है पूंजीवाद को और पूंजीवाद के पनपने की बुनियाद को खत्म करना। वे एक ऐसी राज्य सत्ता को बनाने के लिये लड़ते हैं जो इस उद्देश्य को हासिल कर सके। यह सत्ता, जिसे कम्युनिज़्म के ग्रंथों में डिक्टेटरशिप आफ दी प्रोलेटेरियट (सर्वहारा की हुकूमत) के नाम से जाना जाता है, असलियत में सरकार चलाने का सबसे लोकतांत्रिक तरीका है। यह ऐसी व्यवस्था है जिसमें राज्य सत्ता अधिकतम जनसमुदाय–मजदूर, किसान व मध्यम वर्ग, जो आज सत्ता से वंचित हैं–के हाथों में होती है जब कि अल्पसंख्यक बड़े औद्योगिक घरानों और जमीन्दारों, जो आज सत्ता में हैं, को जनता का शोषण करने वाली सत्ता से वंचित किया जाता है। आज के हिन्दोस्तान में सरमायदार गठबंधनों में कम्युनिस्टों के हिस्सा लेने और अगुवाई देने के विषय पर जो वाद–विवाद चल रहा है, उससे यह देखने में आता है कि इंकलाब और कम्युनिज़्म के आन्दोलन में एक विपरीत इरादों वाली धारा मौजूद है। ये लोग सरमायदारों की वर्तमान हुकूमत के प्रबंधक होना चाहते हैं और वर्तमान हालत को स्थायी बनाना व बरकरार रखना चाहते हैं।

मजदूर वर्ग और मेहनतकशों के लिये तीसरे मोर्चे का क्या कार्यक्रम है? क्या तीसरे मोर्चे पर भरोसा रखने से शोषण और अत्याचार कम होगा या खत्म होगा? क्या मेहनतकशों की मांगे पूरी हो जायेंगी? क्या अमीर शोषक बाकी समाज का खून चूसकर खुद अमीर होना रोक देंगे? जो कुछ देखने में आता है, वह इसका उल्टा ही बताता हे। तीसरे मोर्चे के हिमायतियों का भी यह कहना है कि उनकी सरकार उदारीकरण और निजीकरण के कार्यक्रम को दूसरे "गरीबी घटाने वाले" कार्यक्रमों के साथ जारी रखेगी। मजदूरों और किसानों को कहा जायेगा कि वर्ग संघर्ष रोक दो, स्वचलित संघर्ष और जागरूक संघर्ष दोनो रोक दो क्योंकि इससे "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक" गठबंधन हिल जायेगा। इस प्रकार मजदूर वर्ग के हाथ पैर बांध दिये जायेंगे जब कि सरमायदार पनपेंगे।

मेहनतकशों को अपनी मांगों के लिये संघर्ष नहीं करना चाहिये, ऐसा विश्वास दिलाने के लिये सोशल डेमोक्रेट, सोशलिस्ट और कम्युनिस्टों को काम में लगाना एक

अंतर्राष्ट्रीय धारा है। मुक्त बाजार के हिमायती जन संघर्ष को कुचल नहीं सकते, परन्तु अगर पूंजीपति वर्ग के साथ समझौते का प्रचार करके ये सोशल डेमोक्रेट जन संघर्षो को कुचल सकते हैं तो सरमायदार उन्हें इनाम के रूप में अपना राज्य संभालने की जिम्मेदारी देने को तैयार हैं। यह धारा कुछ साल पहले पोलैंड में लेच वालेसा की पराजय के बाद और रूस में जुगानोव की पार्टी के आने में दिखाई देने लगी थी। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर कुछ लोग इस धारा से उत्तेजित हैं। मिसाल के तौर पर, ज्योति बासु ने कहा है कि 1996 में प्रधान मंत्री का पद इंकार करना उनकी "ऐतिहासिक गलती" थी और हरकिशन सिंह सुरजीत उनसे सहमत हैं। ऐसे समय पर जब सरमायदारों को अपनी हुकूमत स्थायी करने के लिये वामपंथियों और सोशल डेमोक्रेटों की जरूरत है, क्यों न इस मौके का इस्तेमाल करके सत्ता के सबसे ऊंचे पद पर बैठें? यह बासु और सुरजीत का तक्र है, जो मा•क•पा• के पोलिट ब्यूरो और केन्द्रीय कमेटी को यह विश्वास दिलाने की कोशिश कर रहे हैं कि उनकी पार्टी को तीसरे मोर्चे का नेतृत्व, यहां तक कि प्रधान मंत्री का पद भी लेना चाहिये अगर ऐसा मौका फिर मिले। यह सोशल डेमोक्रेसी, यानि सरमायदारों के वामपंथ और मुक्त बाजार के हिमायतियों की सांठ गांठ में काम करने का मंच अपनाने का प्रस्ताव है।

केन्द्रीय और अन्य स्तरों पर वर्तमान राजनीतिक सत्ता और राज्य तंत्र के प्रति हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों का क्या रवैया होना चाहिये? क्या इस सत्ता की हिफ़ाज़त करनी चाहिये, इसे बचाये रखना चाहिये और मजबूत करना चाहिये? या क्या इस सत्ता का नवीकरण करना चाहिये, इसके स्थान पर एक नई सत्ता लानी चाहिये? इन सवालों का कैसे जवाब दिया जाता है, इससे यह स्पष्ट होगा कि कोई हिन्दोस्तानी समाज की प्रगति का द्वार खोलना चाहता है या सरमायदारों और वर्तमान व्यवस्था की हिफ़ाज़त करना चाहता है।

हमारी पार्टी, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी का यह विचार है कि वर्तमान सत्ता की जगह पर एक नई सत्ता, जो जनता द्वारा स्थापित हो और मजदूर वर्ग की अगुवाई में हो, हिन्दोस्तानी समाज को शोषण और अत्याचार से मुक्त करवाने के लिये जरूरी है। देश भर के अलग अलग इलाको में, अलग अलग पार्टियों व दलों में संघर्ष करते हुये बहुत से कम्युनिस्टों व इंकलाबियों का भी यही विचार है। वर्तमान संकट मजदूर वर्ग आन्दोलन को एक अच्छा मौका पेश करता है कि हम सरमायदार गठबंधनों से नाता तोड़ दें और हिन्दोस्तान के नवीकरण के लिये अपने आजाद कार्यक्रम पर एकजुट

हो जायें। हमारी पार्टी सभी कम्युनिस्टों को आह्वान देती है कि वे मजदूर वर्ग की अगुवाई में इंकलाबी मोर्चा बनाने के काम में जुट जायें और हिन्दोस्तान के हालातों से पैदा होने वाले आजादी के अपने सिद्धान्त से मार्गदर्शित होकर हिन्दोस्तान के लोकतंत्र के नवीकरण का झंडा फहरायें।

हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आन्दोलन की आम दिशा को स्थापित करने और हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों की एकता को पुनःस्थापित करने के लिये, यह जरूरी है कि उन राजनीतिक व विचारधारात्मक धाराओं का पर्दाफाश व नाश किया जाये, जो सरमायदार गठबंधनों का समर्थन करने और सरमायदारों द्वारा दिये गये ताज़ को स्वीकार कर लेने के रास्ते पर डटे हुये हैं। नक्सलबाड़ी का ऐतिहासिक नतीजा, कि हिन्दोस्तानी लोगों को अपने हाथ में सत्ता चाहिये, उसे और विकसित करना पड़ेगा। यह हिन्दोस्तान के राजनीतिक सिद्धान्त को और विकसित करके तथा आयोजित ढंग से क्रमशः लागों को अपने कार्यो द्वारा अपना लक्ष्य हासिल करने में अगुवाई देकर ही करना पड़ेगा। उस नई सत्ता के रूप व मूलत्त्व को और विस्तृत करना पड़ेगा तथा उसे हासिल करने का तात्कालिक कार्यक्रम भी बनाना पड़ेगा।

आम कार्यदिशा और सोवियत संघ का पतन

अगर यह मान लिया जाये कि अंतर्राष्ट्रीय तौर पर और हिन्दोस्तान में एक कम्युनिस्ट आन्दोलन है, तो यह भी मानना पड़ेगा कि कम्युनिस्ट आन्दोलन की एक ही आम कार्यदिशा हो सकती है। वस्तुगत तौर पर यह आम कार्यदिशा मार्क्सवाद–लेनिनवाद का यह निष्कर्ष है कि साम्राज्यवाद और इंकलाब के युग में पूंजीवाद के खिलाफ़ जागरूक व संगठित युद्ध के जरिये ही मजदूर वर्ग का संघर्ष विजयी हो सकता है। आम कार्यदिशा के बिना मजदूर वर्ग और मेहनतकश जनता गुमराह हो जाते हैं और संघर्ष को विजय की ओर ले जाने वाला उनका कोई मार्ग दर्शक नहीं होता है। आम कार्यदिशा की यह विशेषता है कि हरेक कम्युनिस्ट पार्टी या दल इस आम कार्यदिशा के अनुसार अपना कार्यक्रम और रास्ता चुनता है। आम कार्यदिशा का सवाल सभी कम्युनिस्टों और इंकलाबियों के लिये बेहद जरूरी है। वर्तमान अवधि में अंतर्राष्ट्रीय सरमायदार और हर देश के सरमायदार समाजवाद और कम्युनिज़्म के खिलाफ़ लगातार विचारधारात्मक दबाव डाले जा रहे हैं, यह कहकर कि समाजवाद खत्म हो गया है, कि खुले बाजार के अनुसार सुधारों के अलावा कोई और चारा नहीं है। आम

कार्यदिशा से अपने आप को लैस करके ही कम्युनिस्ट और मजदूर वर्ग आन्दोलन दुनिया के सरमायदारों के खिलाफ़ लड़ने जाता है। हर देश का मजदूर वर्ग अपने देश के सरमायदारों से टक्कर लेता है, अपनी खास हालतों के अनुसार और खास योजना व संगठन के साथ।

आम कार्यदिशा राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय तौर पर मजदूर वर्ग आन्दोलन के तजुर्बों, भूतपूर्व समाजवादी देशों में समाजवादी निर्माण के तजुर्बो, और पूंजीवादी पुनःस्थापना के खिलाफ़ संघर्ष के तजुर्बों, इन सब की समीक्षा पर आधारित है। आम कार्यदिशा बदलते हुये वस्तुगत और आत्मगत विकासों के साथ साथ विकसित होती रहती है। आम कार्यदिशा मजदूर वर्ग आन्दोलन के सामने बाधाओं को आगे लाती है, और मजदूर वर्ग व मेहनतकशों के उद्धार के संघर्ष को आगे ले जाने के लिए कम्युनिस्ट पार्टियों को कैसे संघर्ष करना चाहिये, यह बताती है।

इस समय, कम्युनिस्ट आन्दोलन की आम कार्यदिशा इस प्रकार है। हालांकि इस समय हम इंकलाब और समाजवाद के पीछे हटने की अवधि से गुज़र रहे हैं, परन्तु यह युग साम्राज्यवाद और सर्वहारा इंकलाब का युग है। पूंजीवाद और समाजवाद के बीच, पूंजी और श्रम के बीच बुनियादी अंतर्विरोध अभी दूर नहीं हुआ है। न ही दूसरे अंतर्विरोध दूर हुये हैं। बीती हुई अवधि की तरह अब समाजवादी राज्यों का मोर्चा मौजूद नहीं है, परन्तु पूंजीवादी व्यवस्था और समाजवादी व्यवस्था के बीच संघर्ष नये तरीकों से चल रहा है। समाजवाद और पूंजीवाद के बीच, सामाजिक उत्पादन और निजी मुनाफा के बीच अंतर्विरोध अंतर्राष्ट्रीय मंच के कार्यक्रम में कई तरीकों से आगे आता है, जैसे कि गरीबी और भूखमरी दूर करने की मांगें, महिलाओं के साथ भेदभाव दूर करने, राष्ट्रीय अत्याचार और हकों का उल्लंघन दूर करने, कुदरती पर्यावरण के साथ सामंजस्य बनाए रखने की मांगें, इत्यादि।

सोवियत संघ का विघटन और दुनिया भर में जो तब्दीलियां हुईं, उनसे कम्युनिस्टों के लिये यह जरूरी हो गया है कि वे हालतों को दुबारा समझें और शीत युद्ध के पश्चात की अवधि के लिये वर्ग संघर्ष की आम कार्यदिशा और युक्तियां तय करें। हमारी पार्टी, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी ने दिसंबर 1990 में अपनी पहली कांग्रेस के समय ही, सोवियत संघ के विघटन से पहले यह चर्चा शुरू कर दी थी। हमने यह चर्चा पहली और दूसरी राष्ट्रीय परामर्शात्मक गोष्ठियों के दौरान भी की। 1993 में दूसरी राष्ट्रीय

परामर्शात्मक गोष्ठी के समय तक, हमने यह फैसला कर लिया था कि साम्राज्यवाद और इंकलाब की अवधि के अन्दर दुनिया ने एक नई अवधि में प्रवेश किया है, जब इंकलाब पीछे हट रहा है और सभी मुख्य अंतर्विरोधों में सरमायदारों की पहल है। इस नई अवधि में कम्युनिस्टों की आम कार्यदिशा पर विस्तार करने के संदर्भ में हमने अपनी नीतियों और युक्तियों पर चर्चा शुरू की, इन नीतियों व युक्तियों की स्पष्ट परिभाषा दी। 1995 में हमने तीसरी परामर्शात्मक गोष्ठी आयोजित की और सार्वजनिक चर्चा के लिये "हिन्दोस्तान किस दिशा में?" नामक पुस्तक में, अपना विश्लेषण पेश किया।

हमारा यह विचार रहा है कि मार्क्सवाद–लेनिनवाद और आधुनिक मार्क्सवादी–लेनिनवादी विचारधारा के बुनियादी निष्कर्षों का पालन और हिफ़ाज़त करके ही कम्युनिस्ट और मजदूर वर्ग आन्दोलन सरमायदारी विचारधारात्मक दबाव पर विजयी हो सकता है। इस आधार पर हमने बीसवीं सदी में कम्युनिज़्म के उतार–चढ़ाव का विश्लेषण किया है और कुछ नतीजों पर पहुंचे हैं। सोवियत संघ के पतन के बारे में हमारे नतीजे अब तक इस प्रकार हैं:

- निर्माण के प्रथम चरण में समाजवाद की विजयों और दूसरे विश्व युद्ध में तानाशाही पर विजय की वजह से 1950 के दशक में समाजवादी समाज का दूसरा चरण शुरू हुआ।

- समाजवाद के इस दूसरे चरण में अर्थव्यवस्था में, राजनीतिक लोकतंत्र में और फलसफा में नई समस्यायें आगे आईं।

- अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में, मूल्य के नियम का दायरा और तंग करना पड़ा, और यह उत्पादों की कीमत तथा श्रम के वेतन को निर्धारित करने में मेहनतकशों की भूमिका को बढ़ा कर किया गया।

- राजनीतिक लोकतंत्र के क्षेत्र में लोगों को सत्ता दिलाने की समस्या के समाधान को और विकसित करना पड़ा तथा समय की जरूरतों के अनुसार बदलना पड़ा। ऐसी स्थिति, जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी राज्य के मामलों की देखरेख कर रही थी, इसे तब्दील करके ऐसी स्थिति बनानी पड़ी जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी लोगों को खुद अपना राज करने में अगुवाई देने लगी।

- फलसफा के क्षेत्र में, समाज के विकास में जागरूक इंसान की भूमिका को स्थापित करनी पड़ी और यह समाजवाद की आर्थिक बुनियाद के निर्माण के जरिये बदले हुये उत्पादन सम्बंधों और सामाजिक सम्बंधों की हालतों में करनी पड़ी।

- क्रुश्चेव की अगुवाई में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी ने इन सभी जरूरतों पर ध्यान नहीं दिया, यहां तक कि इन जरूरतों को इंकार भी कर दिया। इसके बजाय, उन्होंने स्तालिन के व्यक्त्वि के खिलाफ़ संघर्ष, "संपूर्ण जनता" की पार्टी व राज्य बनाने, शान्तिपूर्ण सह अस्त्वि, राज्य के मुरझा जाने, आदि की आड़ में साम्राज्यवाद के साथ मिलकर व होड़ लगाकर एक महाशक्ति बनने का अपना गुप्त कार्यक्रम चलाया।

- समाजवाद के दूसरे चरण की समस्याओं को हल करने की कोई गंभीर कोशिश नहीं की गई थी, इसलिये इंकलाब की गति रुक गई, जब कि अर्थव्यवस्था का फौजीकरण और महाशक्तियों की आपसी लड़ाई तेज़ गति से आगे बढ़ीं

- समाजवाद ढोंगी समाजवाद में बदल गया और लोगों को राजनीतिक सत्ता से वंचित किया गया, जिसकी वजह से जनसमुदाय के बीच असंतोष और अलगाव की भावना आ गई।

- सोवियत व अंतर्राष्ट्रीय सरमायदारों ने जनता के असंतोष का फायदा उठाया और आखिरी चरण में पेरेस्ट्रोइका और ग्लासनोस्ट के नारों का इस्तेमाल करके सोवियत संघ और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी को खत्म कर दिया तथा ढोंगी समाजवाद को पूर्ण रूप से पूंजीवाद और साम्राज्यवाद में बदल दिया।

इन सब नतीजों पर और विस्तार किया जा सकता है और इनकी पुष्टि की जा सकती है। हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी इन और दूसरे मुद्दों पर लगातार चर्चा व विस्तार करती आ रही है। पार्टी का यह भी विचार है कि सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को इस सदी में समाजवाद के उतार–चढ़ाव से मुख्य सबक सीख लेना चाहिये, ताकि हम वर्तमान हालातों में सरमायदारों के खिलाफ़ संघर्ष कर सकें और विजय पा सकें।

कई कम्युनिस्ट पार्टी व दल और मजदूर वर्ग के जन संगठन दुनिया भर में हुई

तब्दीलियों का विश्लेषण करने और आम कार्यदिशा को और विकसित करने में योगदान देने का काम कर रहे हैं। आम कार्यदिशा पर दुतर्फा व बहुतर्फा चर्चा हिन्दोस्तान के अन्दर और बाहर चल रहा है। इस चर्चा को और विस्तृत करना होगा और इसमें सिद्धान्त, विचारधारा और मजदूर वर्ग के तात्कालीन कार्यक्रम को शामिल करना होगा। वे जो सोवियत संघ के उतार – चढ़ाव के तजुर्बे को समझने से झिझकते हैं और इस चर्चा से मुंह मोड़ लेते है, वे इन नई हालतों में वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाने में मदद नही कर रहे हैं।

यह ध्यान देने वाली बात है कि मा•क•पा• और कुछ और पार्टी व संगठन इंकलाब के पीछे हटने की वजहों का विश्लेषण करने और इस समय आम कार्यदिशा को विकसित करने में योगदान देने से मुंह मोड़ रहे हैं। मा•क•पा• की 14वीं कांग्रेस ने इस मुद्दे पर चर्चा को 15वीं कांग्रेस के लिये मुल्तवी कर दिया, यह कहकर कि कम्युनिस्ट आन्दोलन ने समाजवाद की ताकत का "अधिमूल्यांकन" किया था और साम्राज्यवाद का "अवमूल्यांकन" किया था। 1995 में जब मा•क•पा• की 15वीं कांग्रेस हुई थी, जो कि सोवियत संघ के खत्म हो जाने के पूरे चार साल बाद था, तब भी इस मुद्दे पर चर्चा को मुल्तवी किया गया। अब उनकी 16वीं कांग्रेस होने वाली है, जिसे फरवरी 1998 से पीछे हटाकर किसी बाद के समय के लिये रखा गया है। यह जरूरी है कि सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट, चाहे मा•क•पा• के अन्दर हो या बाहर, इस मुद्दे पर फौरी तौर पर चर्चा करें। इस सवाल पर चर्चा न करने का नतीजा यह हुआ है कि बहुत से कार्यकर्ता, बुनियादी संगठन और अलग अलग स्तरों के कम्युनिस्ट इस सरमायदारी दबाव के शिकार बन गये हैं कि कम्युनिज़्म कामयाब नहीं हो सकता, कि सरमायदारों के बाज़ार अनुसार सुधारों का कोई विकल्प नहीं हो सकता। आम तजुर्बो का मूल्यांकन किये बिना इस जटिल अवधि में कम्युनिस्ट जनता के लिये कार्यदिशा नहीं तय कर पा रहे हैं। सरमायदारों के खिलाफ़ संघर्ष करने में उनके रास्ते में यह एक बाधा बन गई है। सरमायदार यह मांग कर रहे हैं कि वे अपने आजाद लक्ष्यों को त्याग दें, कि उनका लक्ष्य सिर्फ दूसरी सरमायदार पार्टियों व दलों के साथ गठबंधन बनाना तक ही सीमित रहे, और हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग के अपने लक्ष्य और कार्यक्रम हों ही नहीं। सरमायदारों ने "साम्प्रदायिक खतरे का विरोध" करने की नीति को हिन्दोस्तान के कम्युनिस्टों और मजदूर वर्ग का लक्ष्य बना रखा है। "मेरे दुश्मन का दुश्मन मेरा मित्र है"–इस मौकापरस्त सिद्धान्त को वे उचित ठहरा रहे हैं। इसकी वजह से मा•क•पा• के अंदर कम्युनिस्टों पर बहुत दबाव है कि वे "साम्प्रदायिक खतरे को रोकने" में जुट

जायें और हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग व कम्युनिस्ट आन्दोलन के कार्यों पर ध्यान न दें।

जब मा•क•पा• की 15वीं कांग्रेस ने समाजवाद के चढ़ाव–उतार और वर्तमान अवधि का मूल्यांकन नहीं किया, तो मा•क•पा• के अंदर कुछ व्यक्ति पार्टी के अखबार में अपने निजी विचार और नतीजे प्रकाशित करने लगे। मिसाल के तौर पर, ई•एम•एस• नम्बूदिरिपाद ने अपने इस विचार का प्रचार किया, कि समाजवाद की समस्यायें तब शुरु हुई जब 1920 में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी ने स्तलिन के नेतृत्व में यह फैसला लिया था कि सोवियत गणराज्य एकमात्र देश के रूप मे ही समाजवाद का निर्माण शुरु करेगा। प्रकाश कराट इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि समस्या की जड़ इस बात में है कि सोवियत संघ का समाजवादी राज्य राजनीतिक बहुवाद पर आधारित न होकर लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद पर आधारित था। इस मुद्दे पर और लोगों के और विचार हैं, जिसकी वजह से आन्दोलन में अज्ञानता, गपशप और भाग्यवाद का वातावरण पैदा हो गया है। कम्युनिस्ट व मजदूर आन्दोलन के आम निष्कर्षों पर बातचीत करने के लिये सभी कम्युनिस्टों को शामिल करके और उनकी जागरूकता को बढ़ाकर काम करने का कम्युनिस्ट पार्टियों का जो तरीका है, उसकी जगह पर कुछ नेताओं द्वारा दादागिरी शुरू हो गई है, जब कि पार्टी के संगठन, कार्यकर्ता और मजदूर वर्ग शक के साथ इस स्थिति को देखते रह गये हैं। हिन्दोस्तान और दुनिया के सरमायदार हमलावर रास्ते पर हैं और इन हालतों में कम्युनिस्ट आन्दोलन एक स्पष्ट कार्यदिशा नहीं तय कर पा रहा है, इसलिये सरमायदार कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं और मजदूरों के बीच अपना ज़हरीला असर फैलाते जा रहे हैं।

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट गदर पार्टी का यह विचार है कि कम्युनिस्ट होने के नाते इस समस्या को हल करना हम सभी की जिम्मेदारी है। सवाल यह नही है कि कौन सही कौन गलत है; कौन पहला है और कौन आखिरी। यह जीवन–मौत का संघर्ष है; साम्राज्यवाद और सरमायदारो के खिलाफ मजदूर वर्ग और मेहनतकशो का संघर्ष है; ताकि वे बेसहारा और असुरक्षित, दिशाहीन, योजना व कार्यक्रम के बिना, नेतृत्वहीन और कार्यदिशा बिना न रह जायें। यह हम हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों की जिम्मेदारी है कि हम अपनी हालतों में और दुनिया के कम्युनिस्टों और मजदूर आन्दोलन की आम कार्यदिशा के संदर्भ में हमारी अपनी आम कार्यदिशा को तय करें। यह एक पहला कदम होगा जिसके जरिये हिन्दोस्तान का मजदूर वर्ग यह साबित करेगा कि वह इंकलाब और समाजवाद लाने में हिन्दोस्तानी लोगों को अगुवाई देने के लिये तैयार है

और अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा की एक योग्य टुकड़ी बतौर अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी निभाने को भी तैयार है।

राजनीतिक एकता के लिये फौरी कार्यक्रम

इस समय, हिन्दोस्तान के शासक वर्गों ने हिन्दोस्तानी लोगों को सरमायदारों के अलग अलग मोर्चों के बीच में बांट रखा है और इस बंटवारे का फायदा उठाकर अपनी संकट ग्रस्त हुकूमत को उचित ठहरा रहे हैं। हिन्दोस्तान में इंकलाब के आत्मगत हालातों को तैयार करने का मतलब है इस हालात को बदल कर सरमायदारों के खिलाफ़ लोगों की राजनीतिक एकता बनाना, ताकि लोग खुद सत्ता में आ सकें।

हिन्दोस्तान की जनता एक है और इसलिये यह जरूरी है कि लोगों की राजनीतिक एकता बनाई जाये, ताकि वे एकजुट होकर काम करें और बंटे हुये न हों। यह एकता एक लक्ष्य के आधार पर बनाई जा सकती है। सरमायदारों ने यह बनावटी विचार फैलाया है कि एक जनसमुदाय के बहुत से लक्ष्य हो सकते हैं। यह सरमायदारों के हित में है। सरमायदारों का एक ही लक्ष्य है, पूंजीवादी व्यवस्था को कायम रखना और मजबूत करना, परन्तु वे यह दिखावा करते हैं कि उनके बहुत से कार्यक्रम हैं, इसलिये उनकी बहुत सी राजनीतिक पार्टियां हैं। सरमायदारों की हुकूमत में बहुत से कार्यक्रमों का अगर नजदीकी से विश्लेषण किया जाये, तो यह साफ हो जायेगा कि उन सब का लक्ष्य है पूंजीवादी गुलामी को बचाये रखना, जब कि वे सब लोगों को अलग अलग पार्टियों के आधार पर बांट देते हैं ताकि लोग अपने सांझे लक्ष्यों और अपने सांझे हितों के लिये न लड़ें। राजनीतिक एकता जरूरी है ताकि लोग अपने लक्ष्य तय कर सकें और इनके लिये लड़ सकें। साथ ही साथ, यह राजनीतिक एकता अपने लक्ष्यों को तय करने और इनके लिये लड़ने के दौरान मजबूत हो सकती है। एक जागरूक राजनीतिक लक्ष्य के इर्द लोगों की राजनीतिक एकता बनाए बिना सिर्फ प्रदर्शन या आन्दोलन करने से इंकलाब नहीं आ जायेगा।

हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के सामने कार्य है हिन्दोस्तानी समाज को इस संकट से निकालने के लिये मजदूर वर्ग को अपना कार्यक्रम बनाने में अगुवाई देना और इस कार्यक्रम के आधार पर एक इंकलाबी राजनीतिक मोर्चा बनाना। इस कार्यक्रम में एक कार्ययोजना भी होनी चाहिये जो मजदूर वर्ग और मेहनतकशों की तात्कालीन

समस्याओं और खतरों तथा उनके हकों और रोजी रोटी की समस्याओं को हल करने पर ध्यान दे और साथ ही साथ इंकलाब और समाजवाद के रणनैतिक लक्ष्य पर भी ध्यान दे। इस कार्यक्रम को हिन्दोस्तानी इंकलाबी सिद्धान्त के विकास पर आधारित होना चाहिये। पिछली कुछ सदियों से राजनीतिक व आर्थिक सिद्धान्तों के नाम से हिन्दोस्तानियों के दिमाग में जो वस्तीवादी व नव–बस्तीवादी पूर्वधारणायें बस गई हैं, उन्हें इस सिद्धान्त के जरिये दूर करना होगा। तीसरी परामर्शात्मक गोष्ठी के बाद आम कार्यदिशा पर विस्तार और चर्चा करके, अब हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी एक ऐसा तात्कालिक कार्यक्रम विकसित करने में लगी है, जो शोषण और अत्याचार के खिलाफ़ मजदूर वर्ग और मेहनतकशों के आन्दोलन के साथ नजदीकी से जुड़ा हुआ होगा।

इस सदी में समाजवाद के चढ़ाव–उतार का विश्लेषण करने के आधार पर, जैसे कि "किस प्रकार की पार्टी" नामक दस्तावेज़ में बताया गया था, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी इस नतीजे पर पहुंची कि एक आधुनिक कम्युनिस्ट पार्टी को इस बात पर जोर देना चाहिये कि वह अपने लिये सत्ता चाहने वाली पार्टी नहीं है बल्कि लोगों को सत्ता दिलाने वाली पार्टी है। लोगों को सत्ता दिलाने के सिद्धान्त और अभ्यास को विकसित करने में हमने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और निभा रहे हैं। वर्तमान गठबंधनों की हालतों में मजदूर वर्ग आन्दोलन की आम कार्यदिशा और कार्यक्रम के बारे में हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों और जागरूक मजदूरों के बीच बातचीत को हमने शुरू किया और उसमें अपना योगदान दिया। हमने तात्कालिक आर्थिक और राजनीतिक मांगों पर बातचीत शुरू की और संयुक्त कार्यक्रमों में हिस्सा लिया। लेकिन हमें यह कहना पड़ेगा कि ऐसे राजनीतिक कार्यक्रम के इर्द मजदूर वर्ग और मेहनतकशों की एकता बनाने के रास्ते में वे लोग रूकावट बनकर खड़े हैं जो इस काम के बजाय सरमायदार राज्य को चलाने के लिये "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक मोर्चा" या तीसरा मोर्चा बनाने का कार्यक्रम रखना चाहते हैं।

मजदूर वर्ग के कार्यक्रम में यह बताना चाहिये कि राजनीतिक मामलों, आर्थिक मामलों, सामाजिक मामलों, अंतर्राष्ट्रीय मामलों, आदि में मजदूर वर्ग को क्या करना चाहिये। जब यह कार्यक्रम मजदूरों और मेहनतकशों को शामिल करके बनाया जायेगा, तो तब "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक मोर्चा" बनाने की नीति को परखा जा सकता है, कि क्या उससे मजदूर वर्ग का उद्देश्य आगे बढ़ेगा या नहीं। "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक मोर्चा"

बनाने के मुद्दे पर बातचीत को इस प्रकार उठाने के बजाय, बड़े नाजायज़ ढंग से मजदूर वर्ग को इस मुद्दे पर पक्ष लेने को कहा जा रहा है और उसे इस समय अपने काम से विचलित किया जा रहा है।

मा•क•पा• तथा कुछ और दलों के अनुसार, "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक ताकतों" के तीसरे मोर्चे को सत्ता में लाने से भा•ज•पा• का खतरा दूर हो जायेगा। 1995 में भा•क•पा• की 15वीं कांग्रेस में भी यही नीति अपनाई गयी थी, जिसके नतीजे मजदूर वर्ग और मेहनतकशों ने 1996 और 1997 में देखे, जब संयुक्त मोर्चा सरकार ने निजीकरण और उदारीकरण की नीति को वहां से और आगे बढ़ाया जहां नरसिंह राव ने उसे छोड़ा था। पिछले 30 सालों से मा•क•पा• और उससे पहले भा•क•पा• के नेताओ का यही तरीका रहा है कि मजदूर वर्ग की हुकूमत बसाने और शोषण को खत्म करने के आजाद लक्ष्य को त्याग दिया जाये और उसकी जगह पर सरमायदारों के इस या उस खंड की पूंछ बना जाये, यह बहाना देकर कि वह दूसरे खंड से ज्यादा प्रगतिशील है।1998 में मा•क•पा• के नेताओं ने इस नीति के साथ अपना यह दावा भी जोड़ दिया कि अगर मौका मिले तो वह सरमायदारों की सरकार को भी चलायेगी।

किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी की ऐसी नीति होनी चाहिये जो मजदूर वर्ग के तात्कालीन तथा लम्बे समय के रणनैतिक लक्ष्यों को और नजदीक ले आये। पर क्या भा•ज•पा• के खतरे को हटाने या केन्द्रीय सरकार को चलाने से मजदूर वर्ग के तात्कालीन या लंबे समय के मकसद को कोई मदद होगी? वर्तमान राजनीतिक प्रकिया के अन्दर क्या इससे मजदूर वर्ग अपने आप को तथा बाकी मेहनतकश जनता को सत्ता में ला सकेगा और राजनीतिक प्रकिया को बदलने की पहल ले सकेगा? क्या 1998 में मा•क•पा• के किसी नेता के प्रधान मंत्री बन जाने से यह कहा जायेगा कि लोग सत्ता में आ गये हैं? क्या पिछली सरकार में भा•क•पा• के नेताओं के केन्द्रीय मंत्री बन जाने से हिन्दोस्तान के मजदूर और कम्युनिस्ट आन्दोलन की प्रगति हुई? क्या ऐसी नीतियां व हरकतें मजदूर वर्ग के तात्कालीन और रणनैतिक लक्ष्यों के खिलाफ़ नहीं है, क्या ये वर्तमान व्यवस्था को मजबूत करने के साथ साथ मजदूर वर्ग को असंगठित नहीं कर देतीं?

मा•क•पा• द्वारा पेश की गई राजनीतिक कार्यदिशा–धर्मनिरपेक्ष और लोकतंत्रवादी मोर्चा बनाना–सरमायदारी व्यवस्था की हिफ़ाज़त करने के बराबर है। यह फौरी तौर

पर भा•ज•पा• के खतरे को हटाने के बहाने किया जा रहा है। भा•ज•पा• से किसे और क्या खतरा है? मा•क•पा• के अनुसार भा•ज•पा• "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक हिन्दोस्तान" के लिये खतरा है। यह "धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक हिन्दोस्तान" यही वर्तमान राजनीतिक सत्ता है जो 1950 में हिन्दोस्तान के संविधान के समय से चल रहा है। इस राजनीतिक सत्ता की खासियत यह है कि हिन्दोस्तान के कुछ गिने चुने अमीर औद्योगिक घरानों और जमीन्दारों को छोड़कर बाकी जनता का सत्ता में कोई हिस्सा नहीं है और बल का प्रयोग करके कैबिनट की मनमानी के अनुसार हुकूमत चलती है। यह सत्ता हिन्दोस्तानी लोगों को हर रोज यह धमकी देती है कि वे वर्तमान व्यवस्था, पूंजीवादी व्यवस्था के खिलाफ़ आवाज़ न उठायें। मा•क•पा• यह नहीं समझाती है कि इस समय भा•ज•पा• के खतरे को दूर करने से हिन्दोस्तानी लोगों के शोषण और दमन की हिफ़ाज़त करने वाली सत्ता कैसे खत्म हो जायेगी। मा•क•पा• यह नहीं समझाती है कि इस समय भा•ज•पा• के खतरे को दूर करने से कैसे हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग को हिन्दोस्तानी लोकतंत्र और हिन्दोस्तानी समाज की प्रगति के लिये तब्दीली लाने में अपना आजाद और जागरूक कार्यक्रम बनाने में मदद मिलेगी। यह तक्र पेश करना कि तीसरा मोर्चा भा•ज•पा• की तुलना में कम खतरनाक है, इसका मतलब है सरमायदारो के उस दबाव का शिकार बन जाना कि वर्तमान व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं हो सकता है। इस प्रकार वर्तमान व्यवस्था की हिफ़ाज़त की जा रही है।

भाजपा के खतरे को दूर करने के लिये तथाकथित धर्मनिरपेक्ष सरमायदार गठबंधनों को बढ़ावा देने की इस नीति का मतलब है मजदूर वर्ग के हितों और उद्देश्यों को पूरा पूरा त्याग देना। इंकलाब को निकट लाने के बजाय, इस नीति से सरमायदारों के आपसी संघर्ष में किसी एक हिस्से को मदद मिलती है, और मजदूरों से सरमायदारी हुकूमत को खतरा दूर किया जाता है। यह एक तरीका है जिससे सरमायदार पूंजीवाद और पूंजीवादी सुधारों को चालू रख सकते हैं, जब कि मजदूर वर्ग को अपनी हिफ़ाज़त में या अपनी पहल पर कोई संघर्ष करने से रोका जाता है। भाजपा को मुख्य खतरा बताने के लिये भाजपा और कांग्रेस के बीच अंतर को बढ़ा चढ़ा कर और साम्प्रदायिक खतरे के बारे में उल्टे सीधे विचार फैलाकर इस नीति पर चलने वाले जानबूझकर या अनजाने में मजदूर वर्ग को सरमायदारों के अलग अलग मोर्चो के बीच बांट देते हैं। इस नीति की वजह से मजदूर वर्ग के एक हिस्से को भाजपा, यानि "ज्यादा बड़े खतरे", के मोर्चे में धकेल दिया जाता है।

इंकलाबी मोर्चा राजनीतिक आधार पर एकता बनाकर ही बनाया जा सकता है। मिसाल के तौर पर, लोगों को सत्ता दिलाने के लिये लोकतंत्र के नवीकरण के सवाल पर मजदूर वर्ग उन सभी ताकतों के साथ एकता चाहता है, जो अपनी सत्ताहीनता को मानते हैं और जो सभी को सत्ता से वंचित रखने वाले सांझे दुश्मन के खिलाफ़ लड़ते हैं।

सत्ता प्राप्त करने के आन्दोलन में आने वाली सभी समस्याओं को हल करके, संघर्ष के तरीकों तथा नई बनायी जाने वाली सत्ता के मूलसार आदि को तय करके ही मजदूर वर्ग आगे बढ़ता है। सरमायदारी हुकूमत का विरोध करने वाली सभी ताकतों के साथ वह संबन्ध बनाने का आह्वान करता है, विचारधारा या नजरिये का भेद भाव किये बिना। मजदूर वर्ग यह समझता है कि कम्युनिज़्म के प्रति वफादारी को हिन्दोस्तान के सभी लोगों के सत्ता हासिल करने के संघर्ष का आधार नहीं बनाया जा सकता है। ऐसा आधार बनाने का मतलब यह होगा कि विचारधारा या राजनीति का भेदभाव किये बिना जो लोग सत्ता चाहते हैं, उन पर विचारधारा की परीक्षा थोप दी जायेगी। इसी प्रकार, "धर्मनिरपेक्ष" होना या "कट्टरपंथी" न होना, ऐसी विचारधारात्मक सोच को सत्ता के लिये संघर्ष करने वाले लोगों की एकता बनाने का आधार नहीं बनाया जा सकता है।

लाखों मजदूर, किसान, महिलायें व नौजवान बाजार के सुधारों के अनुसार अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन का विरोध कर रहे हैं। इन सुधारों का विरोध करने के साथ साथ मजदूर वर्ग अपना इंकलाबी मोर्चा तब तक नहीं बना पायेगा जब तक वह अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन के लिये अपना विकल्प का नजरिया व कार्यक्रम नहीं पेश करेगा। इसी प्रकार, मानव अधिकारों, लोकतांत्रिक हकों, राष्ट्रीय हकों आदि की हिफ़ाज़त में संघर्ष, राजकीय आतंकवाद और व्यक्तिगत आतंकवाद का विरोध, ये सब समाज की विभिन्न ताकतों में एकता बनाने का राजनीतिक आधार बन जाता है। सभी सामाजिक तौर पर कमजोर दलों, दलित, हरिजन, दूसरी जाति के लोगों, महिलाओं, नौजवानों, किसानों, आदि के अपने हकों के लिये संघर्षो को मजदूर वर्ग अगुवाई दे सकता है और यह सुनिश्चित कर सकता है कि ये सिर्फ चंद लोगों के अधिकारों के लिये संघर्ष न बन जायें। इन संघर्षो के जरिये मजदूर वर्ग यह समझ फैला सकता है कि हरेक के हक मिलने पर ही समाज के हर समुदाय को भी अपने हक मिलेगा। लोगों के बीच हुक्मरानों द्वारा फैलाये गये शोवींवादी व अलगाववादी विचारों को भी इसी प्रकार खत्म किया जा सकता है। इसके जरिये लोग एक ऐसा कार्यक्रम बना सकते हैं कि सभी राष्ट्रों

व राष्ट्रीयताओं का आजाद और बराबर हक वाला संघ हो, जो जम्मू–काश्मीर, पंजाब व उत्तर पूर्व के राष्ट्रीय आन्दोलनों को शामिल करके लोगों के हाथों में सत्ता दिलाने वाली एक नई प्रकार की राज्य सत्ता हो।

यह साफ जाहिर है कि मजदूर वर्ग सभी लड़ाकू ताकतों की राजनीतिक एकता नहीं बना सकता है अगर वह विचारधारात्मक एकता की शर्त रखता है। मजदूर वर्ग यह मांग नहीं रख सकता कि एकता बनाने के लिये धर्मनिरपेक्षता के आदर्शों को मानना एक शर्त है या लोक सत्ता के आन्दोलन से इस या उस आदर्श को बाहर रखना चाहिये। सत्ता के लिये संघर्ष को आयोजित और जागरूक ढंग से करना होगा, और मौजूदे सरमायदारी हुकूमत के खिलाफ़ करना होगा, और वर्तमान व्यवस्था में सभी लड़ाकू ताकतों के बीच अधिक एकता बनाकर करना होगा।

धर्मनिरपेक्षता और कट्टरपन

पिछले पचास सालों में मजदूर वर्ग और लोगों की जिन्दगी के तजुर्बे से यह स्पष्ट हो गया है कि साम्प्रदायिक बंटवारा और साम्प्रदायिक हिंसा हिन्दोस्तान के हुक्मरानों के लिये एक मनपसन्द साधन है जिसके जरिये वे अपनी हुकूमत को बनाए रखते हैं। ये साधन अब राज्य संस्थानों व राज्य तंत्र में कानूनों के रूप में शामिल कर दिये गये है और राज्य के उपकरणों की आदत व अभ्यास बन गई है। सुरक्षा ताकतें, राज्य के अफसर और अदालत साम्प्रदायिक बंटवारे को बनाये रखने और साम्प्रदायिक हिंसा को मदद देने में खास भूमिका अदा करते हैं। सरमायदारों की मुख्य पार्टियां, कांग्रेस (इ), भाजपा और उनके सहयोगी दल साम्प्रदायिक आधार पर लोगों को संगठित करने में मशहूर हैं। बार बार इन पार्टियों के कार्यकर्ता अपने तंग और निहित स्वार्थों को बढ़ावा देने के लिये दूसरे धर्म के खिलाफ़ लोगों को उकसाते हुये पाये गये हैं। जिन्दगी के तजुर्बे ने बार बार यह दिखाया है कि हिन्दोस्तान में साम्प्रदायिक हिंसा का खतरा हिन्दोस्तानी राज्य और उसकी हरकतों से पैदा होता है, जिस प्रकार राज्य अपने कानूनों द्वारा लोगों को बांटता है और गिने चुने लोगों को खास अधिकार देता है, उससे पैदा होता है। जब यह सच्चाई है तो यह प्रस्ताव रखना कि धर्मनिरपेक्षता को भाजपा के खतरे से बचाना है, यह न तो साम्प्रदायिक बंटवारे व साम्प्रदायिक हिंसा को खत्म करने में योगदान होगा और न ही ऐसा समाज बनाने में, जहां सभी नागरिकों के बराबर के हक और फर्ज़ होंगे।

धर्मनिरपेक्षता एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका मतलब है समाज के सार्वजनिक जीवन से धार्मिक अधिकार को क्रमशः दूर करना और साथ साथ, लोगों के ज़मीर के हक की हिफ़ाज़त करना। समाज के हर सदस्य के लिये बराबर के हक और फर्ज हासिल करने का संघर्ष एक अन्य स्तर का संघर्ष है। यह राष्ट्रीय और सामाजिक उद्धार के लिये संघर्ष से निर्धारित होता है, पूरे समाज और सभी सम्प्रदायों के लोगों के संघर्ष के दौरान इंसान द्वारा इंसान के शोषण व दमन के क्रमशः खत्म होने से निर्धारित होता है। हर व्यक्ति के अपने ज़मीर के हक को समाज के सभी सदस्यों के बराबर के हको से कम नहीं समझा जा सकता हैं। न ही समाज के सभी सदस्यों के बराबर के हकों को हर व्यक्ति के ज़मीर के हक से कम समझा जा सकता है। हिन्दोस्तान में सरमायदारों ने जो कट्टरपंथी बंटवारे और अत्यधिक गरीबी व पिछड़ेपन की हालत बना रखी है, उन हालतों में यह कहना कि धर्मनिरपेक्षता का संघर्ष राष्ट्रीय व सामाजिक उद्धार के संघर्ष से ज्यादा महत्वपूर्ण है, इसका मतलब है दोनों प्रकार के हकों को नकारना। यह ज़मीर के हक को और समाज के सभी सदस्यों के बराबर के हकों को नकारता है। यह समाज के कट्टरपंथी बंटवारे को दूर करने और लोगों को सत्ता दिलाने के लिये उनकी एकता बनाने के काम में कोई योगदान नहीं देता है; बल्कि इसके बजाय, यह कट्टरपंथी बंटवारे को कायम रखता है और सरमायदारों को मदद देता है।

कोई यह नहीं इंकार कर सकता है कि साम्प्रदायिक बंटवारा और साम्प्रदायिक हिंसा हिन्दोस्तान की जनता की एकता व खुशहाली के लिये बहुत बड़े खतरे हैं और सत्ता हासिल करने के संघर्ष के रास्ते में बड़ी रूकावटें हैं। दक्षिण एशिया के दर्दनाक बंटवारे के पचास साल बाद और "धर्मनिरपेक्ष तथा लोकतांत्रिक गणराज्य" की स्थापना के सैंतालीस साल बाद भी ये समस्यायें गंभीर है। पर साथ ही साथ, हिन्दोस्तान के लोग भूख व अभाव, पुलिस अत्याचार व सरकारी मनमानी, राष्ट्रीय अत्याचार तथा लिंग व जाति के आधार पर अत्याचार, आदि से भी पीड़ित हैं। साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक हिंसा के खिलाफ़ संघर्ष एक नया समाज बनाने के संघर्ष का अभिन्न हिस्सा है। इय संघर्ष की विजय से किसी भी कट्टरपंथी आधार पर जनता को बांटने की पूरी बस्तीवादी विरासत भी खत्म हो जायेगी। साम्प्रदायिक बंटवारे व साम्प्रदायिक हिंसा के खिलाफ़ संघर्ष को या तो मजदूर वर्ग का एकमात्र सही संघर्ष या मुख्य संघर्ष बताने का मतलब है नये समाज के निर्माता बतौर मजदूर वर्ग के लक्ष्य को त्याग देना।

इस समय हिन्दोस्तान में कांग्रेस (इ) व भाजपा, जो कि सरमायदारों के दो अलग

हिस्सों के नुमायंदे हैं, के बीच होड़ लगी हुई है। जिन्दगी के तजुर्बे ने हिन्दोस्तानी लोगों को यह सिखाया है कि ये दोनों पार्टियां समाज के अमीरों के लिये काम करती हैं, हिन्दोस्तानी और विदेशी इजारेदार पूंजीपतियों के लिये काम करती हैं। इस बात का भी काफ़ी सबूत है कि ये दोनों पार्टियां सत्ता में रहने या अपनी खोई हुई गद्दी को फिर से पाने के लिये कुछ भी करने को तैयार हैं, साम्प्रदायिक आधार पर लोगों के खिलाफ़ अराजकता, हिंसा, अत्याचार इत्यादि भी छेड़ने को तैयार हैं। इस सब के बावजूद, सरमायदारों के प्रचारक यह भ्रम पैदा करते हैं कि कांग्रेस (इ) एक धर्मनिरपेक्ष पार्टी हैं जो साम्प्रदायिकता विरोधी संघर्ष कर रही है, और भाजपा एक राष्ट्रवादी पार्टी है, जो हिन्दोस्तानियों के गर्व को पुनःस्थापित करने के लिये लड़ रही है। एक भ्रम दूसरे का पोषण करता है। इस भ्रम को फैलाने में हिस्सा लेने से मजदूर वर्ग और लोगों का राजनीतिक स्तर ऊंचा नहीं हो जायेगा। कांग्रेस (इ) और भाजपा के बीच की लड़ाई में मजदूरों को इस या उस पक्ष में हो जाने का बुलावा देने का मकसद है मजदूर वर्ग का राजनीतिक स्तर गिराना और ठीक सरमायदारों की ही तरह मजदूर वर्ग को बांटना। इसका मकसद है हिन्दोस्तानी गणराज्य की धर्मनिरपेक्ष बुनियादों के बारे में भ्रम पैदा करना और यह न समझना कि यह गणराज्य ही समाज की सभी बुराइयों की जड़ है, लोगों की सत्ता से दूर रखने के लिये जिम्मेदार है।

तात्कालीन संघर्ष को साम्प्रदायिक खतरे के खिलाफ़ संघर्ष बताने का एक खतरनाक नतीजा यह है कि वर्तमान स्थिति के साथ समझौता करने को उचित ठहराया जाता है, इस बहाने के साथ कि यह कम खतरनाक है। इस विचारधारा के अनुसार, हालांकि सभी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक समस्यायें और गंभीर होती जा रही हैं, इससे कोई फक्र नहीं पड़ता है, अगर भाजपा को सत्ता से बाहर रखा जाये। यह धारणा पूंजीवादी व्यवस्था, खास तौर पर हिन्दोस्तान में पूंजीवादी व्यवस्था के खिलाफ़ वर्ग संघर्ष को कमजोर बना देती हैं। "कम खतरे" के इस सिद्धान्त का एक और भी नतीजा है यह धारणा कि नौके को हिलाना नहीं चाहिये, संविधान पर सवाल न करो, हिन्दोस्तानी संघ पर सवाल मत करो, संसदीय व्यवस्था या अर्थव्यवस्था की बाज़ारू दिशा पर सवाल न करो–ऐसा यह तक्र कहता है–क्योंकि अगर आप यह सब सवाल करोगे तो और बड़ा खतरा आ जायेगा।

"धर्मनिरपेक्ष मोर्चे" की तलाश मजदूर वर्ग के बीच कट्टरपंथी राजनीति को थोपने की कोशिश है, एक प्रकार के विचारधारात्मक अनुपालन की मांग है, ताकि मजदूर वर्ग

जनता की राजनीतिक एकता बनाकर पूंजीवादी व्यवस्था के खिलाफ़ संघर्ष न करे। इससे भी बड़ी बात यह है कि यह सोच यूरोप से एक सदी पहले आयात की गई बस्तीवादी धारणा की निरन्तरता है, जिसके अनुसार हिन्दोस्तानी लोग बहुत ही पिछड़े और बंटे हुये थे, और बस्तीवादियों को उन्हे "ज्ञान" दिलाना पड़ा था।

हिन्दोस्तानी लोगों में, विदेशी हमलावरों और स्वदेशी अत्याचारियों, दोनों के खिलाफ़ संघर्ष के दौरान अपनी एकता बनाने की खास परम्परा रही है। यूरोप में पिछले कुछ सैकड़ो सालों में, निरंकुशता और पूंजीवाद के जन्म के हालातों में धर्मनिरपेक्षता का मुद्दा उठा था, और उसने राज्य से गिरजा को अलग करने की मांग का ठोस रूप लिया था। यह संघर्ष दुनिया की अलग अलग जगहों में लोगों द्वारा सैकड़ों–हजारों सालों से किये गये संघर्षों की निरन्तरता थी। हिन्दोस्तान में पंडितों और ब्राह्मणों के अत्याचार के खिलाफ़ संघर्ष ईसामसीह से पूर्व छठी शताब्दी से पहले से ही चल रहा है, जब से जैन धर्म, बौद्ध धर्म, आजीविका और लोकायत के विचार फैलने लगे थे। यह धारा भक्ति आन्दोलन की विभिन्न धाराओं के जरिये सदियों–सदियों से चलती और विकसित होती गई। भक्ति आंदोलन के नेताओं ने यह बताया कि जाति प्रथा का ध ार्मिक विचारों व रिवाज़ों से कोई सम्बन्ध नहीं है और उन्होंने लोगों को जाति प्रथा ठुकराने का बुलावा दिया। धर्म अपनी–अपनी भक्ति का मामला है, ऐसा उन्होंने बताया। वह इस या उस रीति–रिवाज़ पर निर्भर नहीं है। उन्होंने ज्ञान पर ब्राह्मणों के एकाधिकार को चुनौती दी क्योंकि इस अधिकार के आधार पर दूसरी जातियों के लोगों को नीच काम करना पड़ता था। उन्होंने मूलभूत एकता का प्रचार किया और सभी पुरुषों व स्त्रियों द्वारा ज्ञान प्राप्त करने के अधिकार की हिमायत की, जो कि ब्राह्मणवादी प्रथा के विपरीत था। भक्ति आन्दोलन के नेता पूरे हिन्दोस्तान से थे। उस आन्दोलन ने ब्राह्मणवादी प्रथा को अपनी नींव से हिला दिया और यह विदेशी हमलावर के लिये एक खतरा बन गया। उस संघर्ष की मूल बात यह थी कि इंसान को भगवान तक पहुंचने के लिये किसी बीच के इंसान की जरूरत नहीं है, चाहे वह बीच वाला कितना ही ज्ञानी हो। भक्ति व सूफी आन्दोलन उन विचारों के आधार बने जो आज तक हिन्दोस्तानी लोगों को सांझे हित के लिये धर्म, भाषा, जाति, इलाके के अंतर, आदि के बावजूद एकजुट होने को प्रोत्साहित करते हैं।

जिस समय बर्तानवियों ने हिन्दोस्तान पर कब्ज़ा कर लिया था, उस समय हिन्दोस्तानी लोगों का सामाजिक जीवन ब्राह्मणवाद की जकड़ से मुक्त होने वाला था। यह प्रक्रिया

चल ही रही थी जब तथाकथित ज्ञानी बस्तीवादियों ने हिन्दोस्तान पर एक नये प्रकार का ब्राह्मणवाद थोप दिया, जिसमें नया ब्राह्मण यूरोपीय हुक्मरान था जिनके विचारों पर कोई सवाल नहीं किया जा सकता था। भक्ति आन्दोलन की एक विशेषता यह भी थी कि विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं को विकसित किया गया और उनके साहित्यिक स्तर में वृद्धि हुई। भक्तों ने प्रान्तीय भाषाओं में प्रचार किया व लिखा था, संस्कृत में नहीं। इसकी वजह से इन राष्ट्रीय भाषाओं और लोगों के सोच–विचारों के अनुकूल लिपियां भी पैदा हुईं। नये यूरोपीय ब्राह्मण के आने के साथ साथ अंग्रजी भाषा का महत्व भी बढ़ गया। अंग्रेज विचारों को ज्ञान और अंग्रेज़ी में कुशलता को शिक्षा माना जाने लगा।

जो "धर्मनिरपेक्षता" आज हिन्दोस्तान की राजनीति में केन्द्र के वामपंथी गठबंधन का आधार है, उसका हिन्दोस्तानी लोगों के संघर्षों से पैदा होने वाले विचारों व मूल्यों से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस धर्मनिरपेक्षता का सार है बर्तानवी बस्तीवादियों द्वारा पश्चिम से आयात किये गये "ज्ञान" की प्रधानता को थोपना, जब कि उसका संदर्भ हिन्दोस्तानी लोगों के तजुर्बे से बिल्कुल अलग था। किसी हिन्दोस्तानी मजदूर को यह बकवास लगता है कि अगर वह अपने सांझे दुश्मन के खिलाफ़ अपने वर्ग के भाइयों और बहनों के साथ एकता बनाना चाहता है तो उससे पहले किसी और को यह फैसला करना पड़ेगा कि क्या उसकी सोच धर्मनिरपेक्ष है या नहीं। बेइंसाफी के खिलाफ़ संघर्ष ही वह ज्ञान है जो हिन्दोस्तानियों के लिये कीमती है और इस ज्ञान को ब्राह्मणवादी प्रथा व हमलावरों के खिलाफ़ 2500 सालों के संघर्ष के दौरान काफ़ी विकसित किया गया हैं। ऐसा हो ही नहीं सकता कि इस ज्ञान की जगह पर एक ऐसी धारणा थोपी जाये, जिसका जन्म कहीं और, बिल्कुल अलग हालतों में, गिरजा को राज्य से अलग करने की मांग के रूप में हुआ था, और जो हिन्दोस्तान के हालातों में राज्य की देखरेख में धार्मिक सहनशीलता का रूप लेता है।

आज एक नया समाज बनाने के संघर्ष को गुमराह करने वालों के खिलाफ़ हिन्दोस्तानी जनसमुदाय को अगुवाई देकर कम्युनिस्ट आन्दोलन को इस ज्ञान को और विकसित करना होगा। यह ऐसा समय है जब मजदूरों के रक्षात्मक और प्रतिक्रियाशील संघर्षों को आगे बढ़कर नया समाज बनाने के लिये एक जागरूक और अपनी पहल पर किया गया संघर्ष बनना पड़ेगा। इसके लिये यह जरूरी है कि जिन विचारो को लोगों ने अपने रक्षात्मक व प्रतिक्रियाशील संघर्षों से पैदा किया है, उन्हें और विकसित किया

जाये, ताकि वे नया समाज के संघर्ष का विरोध करने वालों के खिलाफ़ ही नहीं बल्कि पुराने समाज की ताकतों से समझौता करने वालों के खिलाफ़ संघर्ष को भी कामयाबी दिला सकें। मजदूर वर्ग पर यह दबाव, कि वे धर्मनिरपेक्षता की पुरानी, सड़ी हुई यूरोपीय धाराणाओं का समर्थन या विरोध करे या हिन्दुओं के गौरव के पुनर्जागरण और पुनःस्थापना का समर्थन या विरोध करे, इसे ठुकरा देना होगा।

आजकल साम्राज्यवाद और दुनिया के सरमायदार जिस धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा देते हैं, उसका बीती हुई सदियों में यूरोप के सरमायदारी लोकतांत्रिक इंकलाबों से पैदा हुये विचारों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। आजकल की धर्मनिरपेक्षता साम्राज्यवादी प्रचार का एक हिस्सा है। इसके अनुसार जो भी ताकत अमरीकी और पश्चिमी साम्राज्यवादियों का विरोध करती है, उसे मध्यकालीन, पिछड़ा और रूढ़ीवादी बताया जाता है। ईरान के लोग जब अमरीकी साम्राज्यवाद का विरोध करते हैं तो साम्राज्यवादी उनके बारे में ऐसा ही कहते हैं। हिन्दोस्तान में कुछ ताकतों को रूढ़ीवादी और दूसरों को धर्मनिरपेक्ष बताकर लोगों को बांटा जाता है।

हिन्दोस्तान के हालातों में "धर्मनिरपेक्ष" और "रूढ़ीवादी" के बीच बंटवारा पिछली सदी से शुरु हुआ था जब 1885 में इंडियन नैशनल कांग्रेस का जन्म हुआ और उससे भी पहले। 1857 में आजादी के प्रथम युद्ध के बाद, जब लोग धर्म, जाति या भाषा के भेद भाव के बावजूद, बर्तानवी बस्तीवादियों के खिलाफ़ एकजुट हो गये थे, तब बस्तीवाद–विरोधी संघर्ष को कमजोर करने का मुख्य तरीका उनके आपस में बंटवारा करने का तरीका था। खास अधिकार वाले कुछ गिने चुने ब्राह्मणों, मुल्लाओं, आदि जो बस्तीवादियों की मदद करते थे, उन्हें इनाम दिये गये और बस्तीवादी राज्य द्वारा पैसे व सहायता देकर साम्प्रदायिक सद्भावना फैलाने के लिये लोगों पर थोपा गया। लेकिन बस्तीवादियों की मदद करने वालों और उनकी साम्प्रदायिक राजनीति के प्रति मेहनतकश लोगों में इतनी नफ़रत थी, कि बस्तीवाद–विरोधी संघर्ष को रोकने के लिये इतना ही काफ़ी नहीं था। बर्तानवी बस्तीवादियों ने "फूट डालो और राज करो" की राजनीति को और विकसित किया। कांग्रेस पार्टी का जन्म और विकास हिन्दोस्तान में साम्प्रदायिक बंटवारे की राजनीति को और बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण साधन था।

अपनी शुरुआत से आज तक, कांग्रेस पार्टी शब्दों में साम्प्रदायिकता और साम्राज्यवाद की निन्दा करती है परन्तु अभ्यास में इन दोनों को बढ़ावा देती है, और इस बर्तानवी

बस्तीवादी सिद्धान्त को मान लेती है कि हिन्दोस्तान अलग अलग शत्रुतापूर्ण धार्मिक सम्प्रदायों, हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों, आदि का सम्मेलन है। धर्मनिरपेक्षता की धारणा को ऐसे पेश किया जाता है कि इसका मतलब है राज्य द्वारा सभी धर्मों को समर्थन। इस आधार पर, राज्य विभिन्न धार्मिक अभिजातों के बीच समान ढंग से विशेषाधिकारों को बांटने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेता है। विशेष अधिकारों को बांटने की प्रथा निरन्तर झगड़े भड़काने और विभिन्न धार्मिक संगठनों द्वारा साम्प्रदायिक ज़हर फैलाने के लिये उपजाऊ भूमि पैदा करने का साधन है। साम्प्रदायिक बंटवारे को खत्म करने और हिन्दोस्तानी समाज के लिये उज्ज्वल भविष्य बनाने का भौतिक आधार हिन्दोस्तानी लोगों के बीच मौजूद है। यह एक लड़ाकू मजदूर वर्ग और किसान के रूप में मौजूद है, जो बेहद कठिनाइयों का सामना करके बस्तीवाद विरोधी संघर्ष में एकजुट हुये थे और पिछले पचास सालों में जिन्होंने अनेक रक्षात्मक व हमलावर संघर्ष किये हैं। यह इस उपमहाद्वीप के विभिन्न इलाकों में लड़ाकू ताकतों की एकता के रूप में मौजूद है। सांझे संघर्ष में एकता की मौजूद बुनियाद पर और निर्माण करना जरूरी है। धार्मिक सम्बंध के आधार पर विशेष अधिकार देने के बस्तीवादी राज्य द्वारा शुरु किये गये अभ्यास को ठुकरा देना चाहिये। विदेशी हुक्मरान की जगह हिन्दोस्तानी बड़े सरमायदारों ने ले ली है, परन्तु विशेष अधिकार देने या न देने के लिये धार्मिक सहनशीलता की प्रथा आज भी जारी है। आजादी के लिये लोगों को एकजुट करने के लिये हिन्दोस्तानियों को बस्तीवादी धर्मनिरपेक्षता पर निर्भर होने की कोई जरूरत नहीं है। बर्तानवियों के आने से पहले हिन्दोस्तानी लोगों के आन्दोलन का मुख्य लक्ष्य था ब्राह्मणवादी जाति प्रथा से मुक्ति और हर इंसान के ज़मीर का हक हासिल करना। परन्तु बस्तीवादियों द्वारा आयात की गई धर्मनिरपेक्षता जाति प्रथा और जातिवादी अत्याचार के साथ साथ सामन्जस्य बनाकर रही। यह पहली चेतावनी थी कि आयात की गई धर्मनिरपेक्षता का सच्चे ज्ञान से कोई संबंध नहीं हैं।

जब हिन्दोस्तानी लोगों की मनोभावना को सही ढंग से समझा जाता है और उनके इतिहास का विश्लेषण किया जाता है, तब बेइंसाफ़ी के खिलाफ़ संघर्ष और जाति, धर्म, लिंग आदि के भेद भाव के बावजूद इस संघर्ष में लोगों की एकता हिन्दोस्तानी संस्कृति के अभिन्न भागों के रूप में सामने आती हैं। अगर कोई ऐसी भावना, कोई ऐसी आकांक्षा है जो सभी हिन्दोस्तानी लोगों को प्रिय है, तो वह है इंकलाब की आकांक्षा। इस फरेब को बनाये रखना कि हिन्दोस्तानी राज्य धर्मनिरपेक्ष है और कोई दूसरी "साम्प्रदायिक ताकतें" हिन्दोस्तानी लोगों के लिये सबसे खतरनाक हैं, यह लोगों के

बंटवारे को कायम रखने, इंकलाब को स्थगित करने और बड़े औद्योगिक घरानों व बड़े जमीन्दारों के हाथों लोगों के अत्याचार को बरकरार रखने के बराबर होगा।

जाति का सवाल

जाति के आधार पर अत्याचार व भेदभाव की व्यवस्था हिन्दोस्तान में सामन्तवादी या मध्यकालीन सम्बन्धों के ज्यादा स्पष्ट अवशेषों में से एक है। जाति पर आधारित अत्याचार व भेदभाव को दूर करना हिन्दोस्तान में लोकतांत्रिक आन्दोलन के असम्पूर्ण कार्यो में से एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह गैर बस्तीवादी संघर्ष की एक मांग थी जो औपचारिक आज़ादी के पचास वर्ष बाद भी असम्पूर्ण है।

हिन्दोस्तानी पूंजीवाद ने जाति प्रथा को कायम रखा है, मेहनतकशों का अत्यधिक शोषण करने के लिये और मजदूर वर्ग व मेहनतकशों के बीच राजनीतिक बंटवारे के लिये। जिस प्रकार, 19 वीं सदी में अमरीका में पूंजीवाद के विकास के दौरान मेहनतकशों का अत्यधिक शोषण करने के लिये गुलामी को कायम रखा गया था, हालांकि यूरोप में गुलामी की जगह सामंतवाद और पूंजीवाद आ गया था, वैसे ही हिन्दोस्तान में पूंजीवाद ने बीते इतिहास से उन सब चीज़ों को बचाये रखा जो जनसमुदाय के शोषण के लिये काम आ सकते हैं। यूरोप में उभरते हुये पूंजीवाद का प्रगतिशील स्वरूप मध्यकालीनता के खिलाफ़ युद्ध में दर्शाया गया था, परन्तु हिन्दोस्तान में इसका उल्टा हुआ। यहाँ पूंजीवाद का विकास उत्पादन के पुराने तरीकों और सामाजिक संगठन की पुरानी व्यवस्था के खिलाफ़ संघर्ष के जरिये नहीं हुआ बल्कि बस्तीवाद द्वारा इनके सुरक्षित रखे जाने के हालातों में हुआ। समय के साथ साथ, हिन्दोस्तानी पूंजीवाद ने जातिवादी व्यवस्था और जातिवादी अत्याचार को धीरे धीरे मिटाने के बजाय, इन्हें मौजूदा व्यवस्था को सुरक्षित और मजबूत रखने में इस्तेमाल किया।

हिन्दोस्तान के सरमायदारों ने पिछले 50 सालों में जातिवादी आरक्षण की बस्तीवादी विरासत में काफ़ी शुद्धी की है। आरक्षण को नीच जातियों को सत्ता में लाने के साधन के रूप में बढ़ावा दिया जाता है, परन्तु हिन्दोस्तान में बहुत से अध्ययन किये गये हैं जो यह दिखाते हैं कि आज तक आरक्षण से उन तबकों के सिर्फ कुछ गिने चुने लोगों को ही फायदा हुआ है, जिनके नाम पर आरक्षण किया जा रहा है। सदियों से

अत्याचार के शिकार बने नीच जातियों के मेहनतकशों और नौजवानों के बीच यह प्रचार किया जाता है कि उनके अत्याचार के कायम रहने की वजह पूंजीवादी व्यवस्था या साम्राज्यवादी दमन या सामन्तवाद के अवशेष नहीं है बल्कि ऊँची जाति के लोग इसके लिये जिम्मेदार ठहराये जाते हैं। यह झूठी सोच फैलायी जाती है कि हिन्दोस्तानी राज्य उनका मसीहा है, कि उनका उद्धार इस व्यवस्था के अन्दर ही होगा। साथ ही साथ, "सवर्ण" वर्ग के विद्यार्थियों और मेहनतकशों के बीच जातिवाद की भावनायें भड़कायी जाती हैं, यह कहकर कि नीच जाति वालों के साथ पक्षपात करने वाली नीतियों के जरिये नौकरियों आदि में "सवर्णो" के खिलाफ़ भेदभाव किया जा रहा है। इस प्रकार, मेहनतकशों की राजनीतिक एकता बुरी तरह तोड़ी गई है।

कम्युनिस्ट आन्दोलन पर बहुत दबाव है कि वह जाति पर आधारित आरक्षण का समर्थन व अनुमोदन करे, इस फरेबी बहाने से कि यह एक "आंशिक लोकतांत्रिक सुधार" है। ध्यान से देखा जाये तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह एक आंशिक लोकतांत्रिक सुधार होने के बजाय, जाति व्यवस्था को बनाये रखने का एक साधन है, यानि पूंजीवादी व्यवस्था और बस्तीवादी विरासत को लागू रखने का साधन है। इसका उद्देश्य है मध्यकालीन जाति व्यवस्था के खिलाफ़ संघर्ष को पूंजीवाद से कम्युनिज़्म तक समाज के इंकलाबी परिवर्तन के संघर्ष से अलग कर देना, इन दोनों संघर्षो को एक दूसरे के खिलाफ़ कर देना।

बस्तीवाद विरोधी संघर्ष और सभी प्रगतिशील ताकतों की मांग जातिवादी अत्याचार को खत्म करने की मांग रही है। इस संघर्ष को गुमराह करने और वर्तमान व्यवस्था को बचाये रखने के लिये सरमायदार जातिवादी आरक्षण की नीति को बढ़ावा देते हैं। कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर कुछ ऐसे लोग हैं जो यह तक्र पेश करते हैं कि जातिवादी अत्याचार को मिटाना हमारा रणनैतिक उद्देश्य है परन्तु आरक्षण नीति का समर्थन करना हमारा तात्कालिक कार्यक्रम है। असलियत यह दिखाता है कि इस नीति को लागू करते हुये पचास साल बाद भी हिन्दोस्तानी समाज इस अभिशाप को मिटाने से बहुत दूर है। इसके अलावा, जातिवादी अत्याचार के खिलाफ़ संघर्ष अपने हकों की हिफ़ाजत करने का संघर्ष है, जब कि आरक्षण नीति एक खास अधिकार के लिये लड़ाई है, एक ऐसा अधिकार जिसे अगुवी या पिछड़ी जाति की परिभाषा बदलकर कभी दिया जा सकता है तो कभी छीन भी लिया जा सकता है। एक ऐसा तात्कलिक कार्यक्रम या युकितगत रवैया जो खास अधिकारों और समायोजन के संघर्ष को अपनाता है, वह

हकों के लिये संघर्ष की मदद नहीं कर सकता है।

कम्युनिस्ट इन्सान के उन हकों के लिये लड़ते हैं जो इंसान होने के नाते उसके हक हैं। इस हक को एक खास अधिकार, जिसे कभी दिया और कभी वापस लिया जा सकता है, में तब्दील नहीं किया जा सकता। हकों के लिये लड़ने का मतलब है खास अधिकारों की व्यवस्था को खत्म करना, एक मध्यकालीन व्यवस्था जो किसी के जन्म, धन–दौलत या दूसरी तंग सोचों पर आधारित है। हिन्दोस्तान की मौजूदा व्यवस्था खास अधिकारों को बांटने पर आधारित है, और हकों को नकारने पर। अगर मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट जाति के आधार पर खास अधिकारों को विस्तृत करने या दूसरे तरीके से इनका वितरण करने की मांग का समर्थन करने लग जायें, तो इसका मतलब होगा वर्तमान व्यवस्था को बनाये रखना और नये समाज के लिये संघर्ष को कमजोर कर देना।

कम्युनिस्टों को सरमायदारों के इस दबाव को ठुकराना होगा कि उन्हें व लोगों को आरक्षण नीति के प्रति उनके रवैये के आधार पर बांटा जाना चाहिये। उन्हें पूंजी के खिलाफ़ एकजुट संघर्ष में, जातिवाद का भेद भाव किये बिना, मजदूर वर्ग को संगठित करने के काम में डटे रहना चाहिये और सरमायदारों की इस जाल में फंसना नहीं चाहिये। हिन्दोस्तान के इंकलाब के दूसरे कार्यों, मसलन सिद्धान्त और फलसफ़ा को आधुनिक बनाना और सरमायदारों के साथ समझौता करने वालों व उनकी राजनीति के खिलाफ संघर्ष करना, इनको करने से हिन्दोस्तान में कम्युनिस्ट आन्दोलन को मदद मिलेगी। तब कम्युनिस्ट मजदूर वर्ग और मेहनतकशों का इंकलाबी मोर्चा बनाने और बस्तीवाद–विरोधी संघर्ष को सम्पूर्ण करने, तथा हमेशा के लिये जातिवादी दमन को खत्म करने में अगुवाई देने में कामयाब होंगे।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष–विश्व बैंक "समाजवाद"

मा•क•पा• और कुछ और वामपंथी पार्टियां अपने आप को उदारतावाद और निजीकरण की नीतियों के विरोधी बताती हैं। ट्रेड यूनियन आन्दोलन में कई कम्युनिस्ट पार्टियों के सदस्य हैं जो विभिन्न सरकारों द्वारा किये गये पूंजीवादी सुधारों का जोर शोर से विरोध करते हैं। परन्तु भा•क•पा• और मा•क•पा• के सांसद उसी संयुक्त मोर्चा सरकार में शामिल थे, जिसने उदारीकरण और निजीकरण की नीतियों और "गरीबी घटाने" की

योजनाओं को लागू किया था। मा•क•पा• की अगुवाई में पश्चिम बंगाल की सरकार के नेता पश्चिम बंगाल के औद्योगीकरण के लिये सक्रियता से विदेशी पूंजी को बुलावा दे रहे हैं। एक ही पार्टी के कम्युनिस्टों के बीच ये विपरीत रवैये मजदूर वर्ग को गुमराह कर रहे हैं। ऐसा इसलिये हो रहा हैं क्योंकि मजदूर वर्ग अपनी योजना के अनुसार अपने पहल पर अपना आजाद संघर्ष नहीं कर रहा है। ट्रेड यूनियन आन्दोलन का विरोध संघर्ष हालांकि दुनियां के सरमायदारों की पुनर्गठन नीति का मुकाबला करने के लिये, मजदूरों की रोजी रोटी की हिफ़ाज़त करने के लिये बहुत महत्वपूर्ण है, पर वह वर्तमान व्यवस्था की सीमाओं के दायरे के अंदर है। हालत तब बदलेगी जब जागरूक मजदूर रक्षात्मक संघर्षों की सीमाओं को पार कर अपने शोषण के हालतों को तब्दील करने का कार्यक्रम अपनायेंगे। आज वक्त को इसकी मांग है।

"समानता के साथ विकास", यह माकपा और संसदीय वामपंथ में उनके तीन सांझेदारों का मुख्य आर्थिक मंच है। यह "मिली जुली अर्थव्यवस्था" वाले कल्याणकारी राज्य के कांग्रेस पार्टी के परम्परागत मंच से किसी खास रुप से भिन्न नहीं है, जहां सार्वजनिक क्षेत्रक के रूप में अर्थव्यवस्था में राज्य के हस्तक्षेप के साथ पूंजीवादी विकास होता है। दूसरे विश्व युद्ध के बाद की अवधि में इस कल्याणकारी राज्य का मुख्य मकसद था मजदूर वर्ग को इंकलाब के लिये अपने आज़ाद कार्यक्रम बनाने से रोके रखना। इस सदी की अस्सी की दशाब्दी तक इंकलाब के रास्ते से मजदूर वर्ग को पथभ्रष्ट करने में कामयाब होने के बाद, दुनिया के साम्राज्यवाद ने कल्याणकारी राज्य के रास्ते से हटकर "कम" सरकार का नारा दिया और उसके बाद आधुनिक समाज और उसके कर्तव्यों की धारणा पर ही हमला करना शुरु कर दिया। इस समय नई बात यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई•एम•एफ•) विश्व बैंक जैसे अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी के संस्थानों ने "गरीबी घटाने" और "समानता के साथ विकास" के नुस्खे के साथ एक किस्म के कल्याणकारी राज्य की परिभाषा देनी शुरु कर दी हैं। जब कि राजकीय क्षेत्रक का विकास जनता की तिजौरी में से पैसे निकालकर उसे पूंजीपतियों को देने का एक तरीका था, "गरीबी घटना" उसी काम को करने का एक और तरीका है। दोनों तरीकों से लोगों को धोखा दिया जाता है, और राज्य जनता की तिजौरी की लूट में मदद देता है। आई•एम•एफ• और विश्व बैंक द्वारा किये जा रहे इस प्रकार के राज्य के हस्तक्षेप को आई•एम•एफ• और विश्व बैंक समाजवाद का नाम देना उपयुक्त होगा। हिन्दोस्तान के अन्दर और बाहर कुछ कम्युनिस्ट आई•एम•एफ• और विश्व बैंक के साथ मिलजुलकर "समानता के साथ विकास" के इस भ्रम को वर्तमान हालातों में बढ़ावा दे रहे हैं।

सोवियत संघ के टूटने और खत्म होने के ठीक बाद, कुछ सालों तक साम्राज्यवाद और दुनिया के सरमायदारों ने बड़ी धूम धाम से भूतपूर्व समाजवादी देशों में निजीकरण और पूंजीवाद की पुनः स्थापना को बढ़ावा दिया। आई•एम•एफ• और विश्व बैंक ने दुनिया भर में कई देशों में अपने ढांचे के पुनर्गठन कार्यक्रम चलाये। और मुक्त बाजार के हिमायतियों का राज चला। नया उदारतावाद और नया बस्तीवाद इजारेदारों द्वारा लूट को मदद देने के लिये और रास्ते में आने वाली सभी राष्ट्रीय रुकावटों को हटाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी के साधन बन गये।

कुछ ही सालों में साम्राज्यवाद और दुनिया के सरमायदारों ने समझ लिया कि लोगों को बेवकूफ बनाये रखने के लिये उन्हें अपना सुर बदलना पड़ेगा। उन्होंने समझा कि पूंजीवादी हमले के विरोध संघर्षों को गुमराह करने के लिये उन्हें फिर से वर्ग समझौते की राजनीति अपनानी पड़ेगी। लेच वालेसा और मुक्त बाजार के सुधारों के दूसरे हिमायतियों की पराजय और फ्रांस, इटली, स्वीडन, मेक्सिको और दूसरे देशों में वामपंथियों के सत्ता में वापस आना, यह सब इस अंतर्राष्ट्रीय धारा को दर्शाते हैं। विश्व बैंक ने हिन्दोस्तान जन्मी और बर्तानवी प्रशिक्षित अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन जैसे विचारकों की मदद ली, राष्ट्रपति को उपदेश देने और उनके कार्यकर्ताओं को विचारधारात्मक प्रशिक्षण देने, कि कैसे वर्ग समझौता–यानि गरीबी घटाने के कार्यक्रम, महिला उद्धार कार्यक्रम, आदि के जरिये समानता के साथ पूंजीवादी विकास को बढ़ावा दिया जाये।

12वीं लोक सभा के होने वाले चुनावों के वर्तमान समय, भाजपा का वादा है स्थायी सरकार और उदारीकरण व निजीकरण के कार्यक्रमों को जारी रखना, पर थोड़े फक्र के साथ। भाजपा हिन्दोस्तानी पूंजी को विदेशी पूंजी के खतरे से बचाये रखने का वादा करती है। यह (स्वदेशी पूंजीपतियों के लिये) समानता के साथ पूंजीवादी विकास की भाजपा की परिभाषा है। माकपा भी समानता के साथ विकास का वादा करती है पर उनकी समानता की परिभाषा भाजपा की परिभाषा से कुछ अलग है। माकपा यह वादा करती है कि तीसरा मोर्चा यह सुनिश्चित करेगा कि मजदूरों, किसानों और सभी मेहनतकश, दबे कुचले लोगों के हितो की हिफाजत की जायेगी, खास कानूनों और प्रावध ानों के जरिये। 1997 की विश्व विकास रिपोर्ट, "बदलती दुनिया में राज्य", में भी विश्व बैंक ने कुछ ऐसी ही बात की हिमायत की है कि बाजार की ताकतों के साथ साथ राज्य को आधारभूत संरचना में निजीकरण और कुछ आवश्यक सामाजिक सेवाओं में सरकार की भूमिका को मजबूत करना चाहिये। जब कि इस दशक के पहले हिस्से में "कम

सरकार" और "ज्यादा मुक्त बाजार" की बात होती थी, तो अब इसकी जगह पर राज्य की "नई" भूमिका की बात चल रही है–गरीबों की "गरीबी घटाने" और पूंजीपतियों के लिये विकास में मदद देने में राज्य की भूमिका की बात की जा रही है।

1947 के बाद, पिछले लगभग 40 सालों में हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग व मेहनतकशों ने कांग्रेस पार्टी की "मिली जुली अर्थव्यवस्था" के नमूने के नतीजों को चख लिया है। उन्होंने नेहरूवी समाजवादी नमूने या टाटा–बिरला समाजवाद के नतीजों को देख लिया है। इससे टाटा, बिरला तथा दूसरे इजारेदार घरानों की दौलत व असर बहुत बढ़ गया है, पर मजदूरों और किसानों के लिये शोषण और अत्याचार से कोई मुक्ति नहीं मिली है। अब, कुछ दिनों तक खुले बाजार वालों के राज के बाद, हम नये रूप में उसी मिली जुली अर्थव्यवस्था को आते हुये देख रहे हैं, विश्व बैंक–आई.एम.एफ समाजवाद के वेश में।

कम्युनिज़्म सभी प्रकार के शोषण से मजदूर वर्ग के उद्धार की शर्त है। पूंजीवाद पूंजी के बदले अधिकतम निजी मुनाफे सुनिश्चित करने के लिये श्रम के शोषण को बनाये रखने और बढ़ाने की हालत है। इसलिये पूंजीवाद को नकार कर ही कम्युनिज़्म का जन्म हो सकता है। पूंजीवाद को बचाये रख कर, पूंजीवादी शोषण को पनपने देकर, यह मुमकिन नहीं है कि कुछ खास सरकारी कार्यक्रमों द्वारा मेहनतकशों के हितों की हिफ़ाज़त की जाये या गरीबी घटायी जाये, हालांकि 1947 से कांग्रेस पार्टी ने इसी भ्रम को बढ़ावा दिया है। हर ऐसी स्थिति में, जब कांग्रेस पार्टी और उसके नारों से भरोसा हट जाता था, जैसा कि 60, 70 और 80 के दशकों में हुआ, तब गैर–कांग्रेसी पार्टियों का कोई गठबंधन, जिसमें कम्युनिस्टों का संसदीय खंड भी शामिल रहा है, आगे आया है, इस व्यवस्था को तब तक बचाये रखने के लिये, जब तक कांग्रेस ने अपनी खोई हुई जगह फिर से न बना ली हो। कांग्रेस पार्टी के बिना "मिली जुली अर्थव्यवस्था के साथ कल्याणकारी राज्य" की कांग्रेसी नीति को कायम रखना–यह मोरारजी देसाई, वी.पी.सिंह व दूसरों की अगुवाई में बने गठबंधनों का मुख्य सार था। देव गौड़ा और गुजराल की अगुवाई में संयुक्त मोर्चा सरकारों का भी यही मुख्य सार था। जब नरसिंह राव की पार्टी केन्द्र में सत्ता खो बैठी, तब वह भी "मानवीय चेहरे के साथ उदारीकरण" की हिमायत कर रहा था। वर्गों के बीच समझौता करना, बेशक कांग्रेस पार्टी सत्ता में हो या न हो, यह कांग्रेसी नीति मार्च 1998 में बनने वाली नई सरकार का भी मुख्य सार होगा।

कम्युनिस्टों को कांग्रेस पार्टी की वर्ग समझौता करने वाली विचारधारा व राजनीति से नाता तोड़ना होगा। 1885 में जब कांग्रेस पार्टी का जन्म हुआ था, तब उसका नारा सामाजिक इंकलाब के बिना आजादी का नारा था। 1947 तक उसके काम हिन्दोस्तान में सामाजिक इंकलाब का विरोध करने के मुख्य उद्देश्य से किये गये थे, जब कि उस समय के राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय हालातों में इंकलाब की अच्छी संभावनायें थीं। बस्तीवाद–विरोधी इंकलाब को सामाजिक इंकलाब में बदलने से रोक कर, 1947 के बाद की अवधि में कांग्रेस पार्टी ने सामाजिक कल्याणकारी राज्य का वेश धारण कर लिया। उस राज्य का उद्देश्य था मजदूर वर्ग को अपने आजाद और इंकलाबी कार्यक्रम के लिये संघर्ष करने से रोकना। लगभग एक सदी से हिन्दोस्तान में मजदूर वर्ग आन्दोलन की इंकलाबी प्रगति को गुमराह करने की इस राजनीति की अगुवाई कांग्रेस पार्टी और उसकी वर्ग समझौताकारी राजनीति ने की है, उसने पूंजीवाद, बस्तीवाद और साम्राज्यवाद के बारे में भ्रम पैदा किये हैं। आज, जब हिन्दोस्तान का मजदूर वर्ग समाज की प्रगति के लिये अपना मंच बनाने की तैयारी कर रहा है, तो यह बेहद जरूरी है कि हिन्दोस्तान की धरती पर पनपे हुये हर प्रकार के भ्रम से तथा उस राजनीति से समझौता करने वाले किसी भी नये तरीके से नाता तोड़ा जाये। दूसरे इंटरनैशनल की पार्टियों की वर्ग–समझौता करने वाली राजनीति से नाता तोड़ कर ही इस सदी की शुरूआत में लेनिन और स्टालिन के समय कम्युनिस्ट आन्दोलन ने बड़ी बड़ी उपलधियां की थी। आज भी, चाहे कांग्रेस पार्टी हो या न हो, वर्ग समझौते की राजनीति और कांग्रेसी राजनीति की हिमायत करने वालों के खिलाफ़ कट्टर संघर्ष करके ही हिन्दोस्तान का कम्युनिस्ट आन्दोलन निश्चयात्मक ढंग से आगे बढ़ पायेगा।

शोवींवाद (उग्रराष्ट्रवाद) और राष्ट्रीय हक

दुनिया को शांतिपूर्ण, लोकतांत्रिक व आधुनिक बनाने में, किसी भी राष्ट्र का आत्मनिर्धारण करने का हक, जिसमें अपने आप को अलग करने का हक भी शामिल है, एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त, लोगों के, पिछली शताब्दियों के, उन संघर्षो से उभर कर आया है जो बस्तीवादियों और साम्राज्य बनाने वालों के विरोध में थे। यह सिद्धान्त उन सभी कोशिशों के विरोध में है जिनके जरिये लोगों के राष्ट्रीय अस्त्वि को नकारा जाता है, उन्हें हड़प लिया जाता है या लोगों की राष्ट्रीयता व अन्य संयोजक लक्षणों के आधार पर उन्हें दबाया–कुचला जाता है या उन पर आधिपत्य जमाया जाता है। विश्वव्यापीकरण के मौजूदा माहौल में सभी देशों, राष्ट्रों और

आदिवासी जनसमुदायों के ऊपर एक बड़ा दबाव है कि वे राष्ट्र आत्मनिर्धारण का हक त्याग दें और साम्राज्यवादियों व पूंजीपतियों से हाथ मिलाकर विकसित हों। आर्थिक व्यवस्था पर विदेशी देशों के दबाव के बढ़ने से आज राष्ट्रों का दमन और भी बढ़ गया है। दबे राष्ट्रों के पूंजीपति साम्राज्यवादी दबाव का सामना करने में असर्मथ साबित हो रहे हैं। हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी इसे एक अत्यधिक महत्व का मुद्दा समझती है कि लोग, न केवल साम्राज्यवाद का और उनके टट्टूओं का विरोध करें, जो आत्मनिर्धारण के खिलाफ सलाह देते हैं। बल्कि अपने राजनीतिक नवीकरण के संघर्ष में राष्ट्र के हक की भी पुष्टि करें–मतलब समाज के सभी लोगों के लिये समान अधिकार व कर्तव्यों की पुष्टि करें। राजनीतिक प्रक्रिया के नवीकरण के लिये, ताकि प्रभुसत्ता लोगों के हाथ में आये, यह तो जरूरी है कि राष्ट्रों के दमन का खण्डन किया जाये, चाहे वह दमन कोई भी ताकत क्यों न कर रही हो। राष्ट्रीयता की समस्या के हल से उदासीन होने की जगह, मजदूर वर्ग सभी मेहनतकश लोगों की मुक्ति के संघर्ष के साथ–साथ, राष्ट्रीय आज़ादी और राष्ट्रों के दमन का अंत करने का झंडा भी हाथ में लेगा। कम्यूनिस्टों के लिये, राष्ट्रों के अलग होने के हक के सहित राष्ट्र आत्मनिर्धारण का हक, हिन्दोस्तान में ही नहीं बल्कि दुनिया भर में, समाज के नवीकरण के संघर्ष का ही एक अभिन्न अंग है।

हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आंदोलन ने, 1920 के दशक में उसके जन्म से, राष्ट्र हक के सिद्धान्त को स्वीकार किया और इसकी रक्षा की। भाकपा ने मजदूर किसान व अन्य वर्गों को, बस्ती–विरोधी संघर्ष करने के लिये, सामाजिक व राष्ट्रीय मुक्ति के मंच पर आयोजित किया था। वह कांग्रेस पार्टी ही थी, जिसने आज़ादी के संघर्ष और सामाजिक मुक्ति के संघर्ष के बीच का संबन्ध तोड़ा। इसके कारण ही बस्तीवादी "फूट डालो और राज करो" की नीति सफल हो पायी और देश का बंटवारा हुआ। बंगाल और पंजाब का बंटवारा 1947 में हुआ और कश्मीर का 1948 में। 1947 के बाद दक्षिण ऐशियायी राष्ट्रों का दुश्मन वर्तानवी बस्तीवादी राज्य नहीं रहा बल्कि इसकी जगह तीन नये राज्यों का जन्म हुआ जिनके मुख्यालय दिल्ली, इस्लामाबाद और ढाका में थे और जो राष्ट्रों व आदिवासियों के ऊपर वही पुराना राजनीतिक नियंत्रण जारी रखे जिससे उनकी राजनीतिक उदासीनता और भी बढ़ी। नये राज्यों ने अपने आपको हिन्दोस्तानी, पाकिस्तानी व बंगलादेशी राष्ट्रीयताओं का हिमायती दर्शाने की कोशिश की। इस दौरान राष्ट्रों और आदिवासियों के असली संघर्षों को तीनों देशों में "राष्ट्र की एकता व क्षेत्रीय अखंडता के बचाव" के नारे तले दबाया गया। पंजाब, बंगाल व कश्मीर जैसे

खंडित राष्ट्रों की सच्चाई को कबूल करना ही बंद कर दिया गया। दिल्ली, ढाका और इस्लामाबाद में विराजमान पूंजीवादी राज्य की हिफाज़त को ही, एक शोवींवादी तरीके से, मजदूर वर्ग का सबसे बड़ा लक्ष्य बताया गया।

सारांश में, पूंजीपतियों ने मजदूर वर्ग के सामाजिक मुक्ति के संघर्ष को नष्ट कर दिया, पहले उसे आज़ादी की लड़ाई से अलग करके, और बाद में, सामाजिक मुक्ति की जगह, आज़ादी के बाद आये पूंजीवादी राज्य की हिफाज़त का मुद्दा उठाकर। हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट आंदोलन पर अत्यधिक दबाव आया कि वे भी "देश की एकता व अखंडता के बचाव" का नारा अपना लें, खास तौर पर 1963 के संविधान के 16 वें संशोधन के पश्चात। अंत में, बंगलादेश के एक अलग देश बनने के कुछ समय बाद, जब उत्तर–पूर्व में मुक्ति संघर्ष प्रचण्ड रूप से चल रहा था और जब माकपा के बंगाल के नेताओं ने, भाकपा (माले) की अगुवाई में किये गये सशस्त्र किसान संघर्ष को दबाने की भूमिका अदा की, तब 1972 में माकपा ने राष्ट्र आत्मनिर्धारण का हक औपचारिक तौर से त्याग दिया। मदुरई में अपनी 9वीं कांग्रेस में एक औपचारिक संशोधन स्वीकृत करके ऐसा किया गया। इस संशोधन की सफाई बतौर एक टिप्पणी में यह कहा गया : "केन्द्रीय समिति के नजरीये में "राष्ट्र आत्मनिर्धारण के हक" को हटाने के प्रस्ताव की महत्ता को समझने के लिये न केवल मार्क्स, ऐंगल्स, लेनिन व स्टालिन द्वारा विस्तारित राष्ट्र व बस्तीवाद संबंधी प्रश्नों पर मार्क्सवादी–लेनिनवादी विचारों को नजर में रखने की आवश्यकता है बल्कि यह भी जरूरी है कि हम नये युग का, जिससे हम गुजर रहे हैं, और राष्ट्रीयता के प्रश्न का, जैसा वह हमारे देश में पेश आता है, खास तौर पर मूल्यांकन करें।" इसके बाद "राष्टीयता का प्रश्न, जैसा वह हिन्दोस्तान में पेश आता है" की व्याख्या की गयी है।

माकपा की 1972 की 9 वीं कांग्रेस में दी गयी "राष्ट्रीयता का प्रश्न, जैसा वह हिन्दोस्तान में पेश आता है" की धारणा का मतलब इस प्रकार दिया जा सकता है : (क) हिन्दोस्तानी संघ बहुभाषी और बहुराष्ट्रीय है; (ख) 1947 में राजनीतिक आज़ादी जीतने के बाद, आत्मनिर्धारण की मांग हासिल हो चुकी है और अब यह मांग राजनीतिक लोकतंत्र के दायरे में नहीं है; (ग) हिन्दोस्तान में, राष्ट्रीयताओं का संघर्ष देश के किसी एक दमनकारी राष्ट्र के खिलाफ नहीं है, बल्कि हिन्दोस्तानी संघ में सभी राष्ट्रों का सांझा संघर्ष, आर्थिक निर्भरता व पिछड़ेपन को खत्म करने के लिये है, (घ) यह सांझा संघर्ष हिन्दोस्तान की एकता को कायम रख कर सहज बनाया जा सकता

है; और (ड•) विघटन करने वाली ताकतों के बढ़ने से, शासक वर्गों को संघर्षरत लोगों को असंगठित करने में और अस्त–व्यस्त करने में मदद मिलेगी। इस धारणा के अनुसार, बहुराष्ट्रीय हिन्दोस्तान के अन्दर राष्ट्रों के संघर्ष को राष्ट्र–आत्मनिर्धारण का संघर्ष नहीं माना जा सकता है। यह केवल शब्दों का खेल नहीं है बल्कि घोषणा है कि माकपा राष्ट्र हकों को नहीं मानती है। दूसरा, कम्युनिस्ट जानते हैं कि "आर्थिक निर्भरता और पिछड़ेपन को खतम करने का सांझा संघर्ष" एक राष्ट्रीय संघर्ष नहीं है बल्कि सामाजिक मुक्ति का संघर्ष है जिसे सचेत आधार पर ही किया जा सकता है। "सांझा संघर्ष" बिना योजना बनाए, बिना मजदूर वर्ग की पार्टी के नेतृत्व में मजदूर वर्ग द्वारा, अपने आप नहीं हो सकता है। कम से कम इस पहलू से तो सांझा संघर्ष, राष्ट्र के संघर्ष से अलग है।

इस धारणा के आधार पर माकपा ने किसी भी राष्ट्र के आत्मनिर्धारण संघर्षों की हिमायत करना छोड़ दिया है और इसके साथ ही सामाजिक मुक्ति के लिये, वर्ग को सचेत संघर्ष में लाने का संगठात्मक काम भी। इसकी जगह पर उठाया है उन्होंने पूंजीवादी राज्य सत्ता को बचाने का काम और "देश की एकता और अखंडता" को बचाने का काम। माकपा के अनुसार, हिन्दोस्तान एक ऐसा देश है जिसने अपना आत्मनिर्धारण का हक 1947 में ही जीत लिया था। उनकी ऐसी घोषणा से, बहुराष्ट्रीय हिन्दोस्तान के संघर्षरत लोग अलगाववादी ताकत में बदल जाते हैं क्योंकि वे इस हिन्दोस्तानी (राष्ट्र राज्य) सत्ता के खिलाफ लड़ रहे हैं जो 1947 में पैदा हुआ था। स्वाभाविक रूप से, जैसे पीड़ित को ही सलाह दी जाती है कि उसे अत्याचार स्वीकार करना चाहिये नहीं तो अत्याचारी बौखलाकर और भी ज्यादा चोट न लगाये, माकपा को डर लगता है कि अगर लोग 1947 में बनाये इस हिन्दोस्तानी राज्य के विरोध में संघर्ष करेंगे तो शासक वर्ग लड़ाकू लोगों को असंगठित करेंगे और उनको नष्ट करेंगे। इस बेतुकी स्वयं–अंतर्विरोधी धारणा के जरिये, कम्युनिस्टों का काम लोगों की राजनीतिक एकता बनाने से बदलकर रस्मे–आज़ादी से बने पूंजीवादी राज्य सत्ता को बरकरार रखना हो जाता है। आज तक इसी धारणा के आधार पर माकपा लोगों की राजनीतिक एकता बनाने का विरोध करती आई है। इसी धारणा से प्रेरित होकर उनके नेताओं ने तीसरे मोर्चे के तहत पूंजीवादी दलों की एकता बनाने का काम अपनाया है, जिससे हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग को उसकी अगुवा पार्टी से वंचित रखा गया है।

इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं है कि जहां भी लोग राष्ट्र हक की लडाई में जूझे

हैं, वहां माकपा की नीति से लोग बहुत नाराज़ हैं। उदाहरण से, अगर कोई एक मणिपुरी से पूछे कि राष्ट्र के आंदोलन और आज के हिन्दोस्तानी संघ में क्या रिश्ता है तो वह यही कहेगा कि हिन्दोस्तानी संघ मणिपुरी राष्ट्र को नाकारता है। वह कहेगा कि बस्तीवाद के बाद की इस व्यवस्था, जिसे हिन्दोस्तानी संघ के नाम से जाना जाता है, की स्थापना ही मणिपुरी राष्ट्र के हक को नकार कर हुई थी, उनके राजा से जबरदस्ती से संयुक्ती करार पर दस्तखत करवाकर और फिर इम्फाल में लोगों की अपनी बनाई प्रतिनिधि सभा को बरखास्त कर के। मुख्यरूप से, हिन्दोस्तानी संघ सशक्त बल के कब्जे से मणिपुरी लोगों के हकों का उल्लंघन करता है, ऐसे हक जो उन्हें एक विशिष्ट लोग होने के नाते मिलते हैं, जो एक विशिष्ट क्षेत्र में रहते हैं, जिनका बर्तानवी राज के पहले और बाद में एक स्वतंत्र अस्त्वि था और जो अपने आप को एक राज्य सत्ता में संगठित करना चाहते हैं, अपने हितों की देखरेख करने के लिये। मणिपुरी लोग अपने इस संघर्ष में हिन्दोस्तानी लोगों का समर्थन चाहते हैं और खुद भी हिन्दोस्तानी लोगों को अपनी तरफ से प्रोत्साहन देते हैं, कि हिन्दोस्तानी लोग दिल्ली में एक ऐसी नई ताकत बनाऐं जो हिन्दोस्तान के सभी लोगों को सत्ता देगी। इसके बावजूद भी, माकपा यह तक्र पेश करती है कि हिन्दोस्तानी संघ को ऐसे संस्थान के रूप में देखना चाहिये जिसकी हिफाज़त करने की जरूरत है और जिसे मणिपुरी जैसे "अलगाववादी ताकतों" से बचाने की जरूरत है। केन्द्रीय सत्ता और सेना के मनमाने राज्य की हिमायत करने से माकपा ने बहुत नुकसान पहुंचाया है, न केवल ऐसी जगहों पर जहां हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों व मजदूर आंदोलन के संभावित मित्रों को दूर भगाया गया है, बल्कि खुद हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग के संघर्षों को, जो इस आधार पर बांटे गये हैं।

जब माकपा हिन्दोस्तान में राष्ट्र संघर्ष को स्वीकारती है तो वह उन प्रादेशिक ताकतों की बात कर रही हैं जो प्रभावी पूंजीवादी राजनीतिक दलों में संगठित हैं और जो राज्य की सरकार के नियंत्रण में अपना दावा रखती हैं और जो दिल्ली में संसद मे भी अपने सांसद भेजते हैं। आमतौर पर माकपा ने ऐसे प्रादेशिक राजनीतिक दलों से गठजोड़ बनाया है जो प्रस्थापित राजनीतिक व्यवस्था में अपना हिस्सा तलाश रहे हैं। साथ ही वह ऐसी किसी ताकत का विरोध करती है जो दिल्ली की प्रस्थापित सत्ता के साथ समझौता करने को तैयार नहीं हैं। जब बात ऐसी जगह की है जो बस्तीवाद की या केन्द्र की मनमानी से बुरी तरह पीड़ित रही हैं जैसे कि कश्मीर और उत्तर–पूर्व, तो माकपा कांग्रेस (इ) और भाजपा का साथ देती है, उनके साथ मिलकर एक आवाज

में "देश की एकता व अखंडता" की पूंजीवादी शोवींवादी धुन गाती है। इस तरह की नीति कम्युनिज़्म और कम्युनिस्ट आंदोलन की शान पर कीचड़ उछालती है। यह राष्ट्र के सवाल पर लेनिनवादी विचार से एकदम उल्टा है। लेनिनवादी धारणा के अनुसार, कम्युनिस्ट आंदोलन उन्हीं राष्ट्र मुक्ति आंदोलनों से गठजोड़ बनाता है जो मौजूदे स्थिति के लिये खतरनाक हो और जो उसको कमज़ोर करता है। तभी यह गठजोड़ मजदूर वर्ग के संघर्ष में सहायक हो सकता है।

इसका क्या मतलब है कि हिन्दोस्तानी संघ में राष्ट्र संघर्ष किसी एक या दूसरे दमनकारी राष्ट्र के विरोध में नहीं है? यह तो सच है कि हिन्दोस्तानी संघ में ऐसा कोई एक राष्ट्र नहीं है जो दमनकारी हो, पर फिर भी क्या राज्य सत्ता ही एक अकेली दमनकारी नहीं है? इस बस्तीवाद के बाद बनी राज्य सत्ता के ऊपर बड़े पूंजीपतियों का वर्ग है जो हिन्दोस्तान के अलग अलग राष्ट्रों , राष्ट्रीयताओं और आदिवासी जनों का दमन करते हैं, बहुत सी जगह हथियारों के जरिये कब्जे में रखते हैं। इसीलिये क्या यह जरूरी नहीं है कि कम्युनिस्ट उन सब लोगों के साथ राजनीतिक एकता बनाने की कोशिश करें जो दमन के खिलाफ संघर्ष कर रहें हैं, उन्हें भी सम्मिलित करके जिनके राष्ट्र के हक हिन्दोस्तानी संघ द्वारा नकारे गये हैं?

यह कहने का मतलब कि 1947 में आजादी हासिल होने के बाद आत्मनिर्धारण की मांग पूरी हो गयी है और "वह लोकतंत्र के दायरे में नहीं हैं" यही है कि हिन्दोस्तानी संघ ने हिन्दोस्तान के राष्ट्रों का सवाल हल कर लिया है। राष्ट्रों के टुकडों में बंटे होने की वास्तविकता और दूसरे राष्ट्रीय हकों की पुष्टि के संघर्षों की वास्तविकता को देख कर तो ऐसा नहीं कहा जा सकता है। हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग की अभिलाषा है कि सभी लोगों का विकास होना चाहिये और राष्ट्रीय सवालों का हल आत्मनिर्धारण के सिद्धान्त से होना चाहिये। व्यवहारिक तौर से, इसका मतलब है कि वह उन सभी संघर्षों की हिमायत करेगा जिनका लक्ष्य वही है जो अभी मजदूर वर्ग का है लोगों का सत्ता में आना और एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करना जो यह सुनिश्चित करे कि बड़े पूंजीपतियों का एक अल्पसंख्यक वर्ग सत्ता पर एकाधिकार न कर सके। अगर सच में मा•क•पा• यह सोचती है कि हिन्दोस्तानी संघ बहुभाषी और बहुराष्ट्रीय है जैसा इसने 1992 की कांग्रेस में कहा, तब इस बहुराष्ट्रीय हिन्दोस्तानी संघ का स्वरूप और सार इस प्रकार का बनाना पड़ेगा जो मजदूर वर्ग के मुक्ति संघर्ष के लिये अनुकूल हो। हिन्दोस्तान का संविधान तो यह नहीं मानता है कि हिन्दोस्तानी संघ का बहुराष्ट्रीय

स्वभाव है और इसी आधार पर वह सभी राष्ट्रीय संघर्षो के खिलाफ युद्ध चला रहा है। कम्युनिस्टों को हिन्दोस्तान का बहुराष्ट्रीय रूप मानना होगा और आज़ाद व बराबर हक वाले राष्ट्रों के संघ के लिये लड़ना पड़ेगा।

हाल में ही मा•क•पा• के प्रकाश कराट ने "पीपल्स डेमोक्रेसी" में हिन्दोस्तान के राष्ट्रों और राष्ट्रीयताओं के संदर्भ में "भाषा राष्ट्रीयता" पर लेख छापा। उसमें प्रस्तुत धारणा इस प्रकार हैः हिन्दोस्तानी संघ में सिर्फ एक हिन्दोस्तानी राष्ट्र है। कश्मीरी, पंजाबी, मणिपुरी इत्यादि सिर्फ भाषायों के गुट हैं,जो ज्यादा से ज्यादा अपने इलाके की स्वायत्तता की अभिलाषा रख सकते है परन्तु आत्मनिर्धारण की मांग नही रख सकते हैं। यह धारणा उनके 1972 के विचारों, जिनकी चर्चा हमनें पहले ही की थी, का ताक्रिक नतीजा है। राष्ट्रों को सिर्फ भाषा गुटों के दर्जे पर घोषित करने से, राष्ट्रों की किसी भी राजनीतिक मांग को मजदूर व कम्युनिस्ट संदेह की नजर से देख सकते हैं। दूसरे शब्दो में, पंजाबी, कश्मीरी व बंगाली तो अपने बंटे हुये राष्ट्रों को एक कर देने की अभिलाषा भी नहीं रख सकते हैं। और भविष्य में भी , ज्यादा से ज्यादा वे हिन्दोस्तानी संघ के अंदर ही कुछ प्रादेशिक आजादी पाने की आंकांक्षा रख सकते हैं। ऐसे विचार न तो किसी भी ज्ञात सिद्धातों के आधार पर हैं और न ही दुनिया के लोगों के अनुभव के आधार पर जैसे कि आयरलैंड, कोरिया , इत्यादि में, जहां लोग अपने विभाजित राष्ट्र के टुकड़ो को फिर एक करना चाहते हैं। ये धारणा दक्षिण एशिया के लोगों को अपमानित रखने की घोषणा है। जब मा•क•पा• ऐसे विचारों को अपनाती है तो यह हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग को ऐसे प्रशिक्षण देने के बराबर है जिससे मजदूर वर्ग लोगों और राष्ट्रीय संघर्षो को, पूँजीपतियों से अपनी लडाई में, मित्र के जैसा नहीं देखता है बल्कि एक दुश्मन के जैसे, जो "हिन्दोस्तान की एकता और अखंडता" के लिये खतरा हैं। साथ ही, इस धारणा के मुताबिक हिन्दोस्तानी राज्य सत्ता और हिन्दोस्तानी पूंजीपति वर्ग, मजदूर वर्ग के मित्र वर्ग के रूप मे पेश आते हैं, जैसा कि कांग्रेस पार्टी पिछले 100 साल से प्रचार करती आयी है। मजदूर वर्ग के नेतृत्व में क्रांतिकारी मोर्चा बनाना असंभव होगा अगर राज्य के आंतकवाद और व्यक्तिगत आंतकवाद का खंडन नहीं किया जाता और साथ में उनका भी विरोध जरूरी है जो राज्य के आंतकवाद और केन्द्र की मनमानी की सफाई देते है "हिन्दुस्तान की एकता और अखंडता बचाने के लिये"। कम्यूनिस्टों को सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद के लिये संघर्ष करना है, सभी राष्ट्रों व लोगों की समानता कायम करने की कोशिश करनी है चाहे वह बड़े हों या छोटे। हिन्दोस्तानी कम्यूनिस्टों को एक नये हिन्दोस्तान की रचना करने के लिये संघर्ष करना

है, एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था की रचना करनी है जो सभी राष्ट्रों को स्वेच्छा से एक साथ आने का मौका देगी। तभी ऐसे संघ की हिफाजत की जा सकती है क्योंकि ऐसा संघ राष्ट्रों के हित में होगा।

हिन्दोस्तान के अलग अलग भागों में राष्ट्र मुक्ति के संघर्षों को देश की एकता व अखंडता के लिये बड़ा खतरा बता कर, मा•क•पा• मजदूर वर्ग को यह बुलावा दे रही है कि वह हिन्दोस्तान के पूंजीपतियों के साथ मिलकर वर्तमान स्थिति को जारी रखें। इस धारणा का ताक्रिक निष्कर्ष है कांग्रेस(इ) और भाजपा और ऐसे अन्य दलों के साथ गठबंधन बनाना जो शोषण और लूट खसौट की प्रस्थापित व्यवस्था की हिफाजत करते हैं, और मजदूर वर्ग और लोगों के तात्कालीक और दीर्घकालीन हित को त्याग देना।

संघर्ष के रूप

तात्कालिक कार्यक्रम व किसी भी संघर्ष के रूप की अनुकूलता की चर्चा की शुरुआत तभी की जा सकती है जब हमारे युग के मुख्य अंतरविरोधों की दशा और कम्युनिस्ट आन्दोलन व अंतर्राष्ट्रीय और हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग आन्दोलन में मौजूदा रुकावटों का विश्लेषण किया जाये। ऐसा सोचना गलत होगा कि किसी संघर्ष के रूप की प्रामाणिकता, क्रांतिकारी प्रक्रिया के वस्तुगत चढ़ाव–गिराव पर ध्यान दिये बिना की जा सकती है। वैसे भी, किसी कार्यक्रम की प्रामाणिकता की पुष्टि करने और सबसे अधिक सफलता पाने के लिये, बदलती ताकतों के अनुपात के अनुसार उसे तालमेल में लाना तो प्रत्येक अवधि के लिये जरूरी है। किसी भी संघर्ष के रूप को इस्तेमाल करने के अनुभव का और उस संघर्ष से निकली स्थिति की समीक्षात्मक विश्लेषण करना भी आवश्यक है। एक सामान्य दिशा जिसके आधार पर लड़ाकू ताकतें विचार करें और अपने संघर्ष की दिशा निर्धारण करें, और इस सामान्य दिशा पर आधारित एक कार्यक्रम के बिना यह जरूरी नहीं कि सशस्त्र संघर्ष पूंजीवाद पर लोगों की जीत हासिल कर सकेगा। वास्तव में पुलिस, सेना, दूसरे सुरक्षा बलों के साथ–साथ गैर–सरकारी दस्तों के द्वारा पूंजीपति, लोगों के खिलाफ जंग छेड़ते हैं। इसकी वजह से लोग प्रतिक्रिया में सुरक्षात्मक हो जाते हैं और सामान्य दिशा के रास्ते को, और उस पर आधारित कार्यक्रम को छोड़ देते हैं।

पूंजीपतियों को विश्वास है कि वे अपनी बेहतरीन गोलाबारी की क्षमता से और सेना

के संगठन से लोगों के किसी भी स्वचालित सशस्त्र संघर्ष को पराजित कर सकतें हैं। वे "दहशतवाद विरोधी" दस्तों के जरिये और दुरुत्साहकों के जरियें लोगों को शस्त्र धारण करने के लिये उकसाते हैं। नक्सलबाड़ी की अवधि इस तरह के उदाहरणों से भरा है जिसमें हिन्दोस्तानी शासन ने सशस्त्र संघर्ष के हथियार के जरिये मजदूरों व किसानों के सत्ता के संघर्ष पर काबू पा लिया था। अपने साधकों के कारनामों से, हिन्दोस्तानी शासन ने सशस्त्र संघर्ष का बहाना देते हुए राजकीय आतंक शुरु किया और राजनीति का अपराधीकरण किया। इस प्रकार से राज्य ने मजदूरों वर्ग और लोगों के संघर्ष में बड़ीं बाधाऐं पहुचायीं। ऐसे समय पर और ऐसी परिस्थिति में, सभी कम्युनिस्टों के लिये जरुरी हो जाता है कि वे सभी संघर्ष के तरीकों की उपयोगिता को परखें, सशस्त्र संघर्ष, संसदीय संघर्ष, मजदूर संघ संघर्ष, इत्यादि। हमेशा ऐसे संघर्ष के तरीके अपनाने चाहिये जिससें लोगों को फायदा हो और पूंजीपति वर्ग रक्षात्मक रहे। सबसें उपयुक्त संघर्ष का रूप मजदूर वर्ग और लोगें की राजनीतिक तैयारी पर निर्भर है। या तो ऐसी घोषणा करना कि सिर्फ संसदीय संघर्ष उपयुक्त है, और इसके आधार पर हिन्दोस्तानी राज्य द्वारा सशस्त्र संघर्ष करने वालों पर राजकीय आंतक की सफाई देना, या सिर्फ सशस्त्र संघर्ष को हर परिस्थिती में उपयुक्त बताना, दोनो ही कम्युनिस्ट राजनीतिक कार्य के स्तर को मूर्खतापूर्ण बना देता है।

यही कारण है कि हिन्दोस्तानी राज्य, जो पहले से शस्त्रीकरण में बहुत आगे है, आज भी अपने शस्त्रीकरण को बढ़ा रहा हैं। मजदूर वर्ग इस भ्रम में नहीं रह सकता है कि पूंजीपति वर्ग शांतिप्रिय है, या राज्य की संगठित ताकत मजदूरों व मेहनतकशों को सत्ता से वंचित रखने के सिवा और किसी लिये है। पुराने समाज के विरोध में नये समाज का निर्माण करने वाली ताकतों का वर्ग संघर्ष आखिर में हथियारी संघर्ष का रूप लेगा। परन्तु अभी के समय पर, वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिये संघर्षो के सभी तरीकों की जरूरत है, जो परिस्थिति के अनुसार जरूरी है। पहले मजदूर वर्ग को अपने लिये और बाकी समाज के लिये एक कार्यक्रम आगे लाने की जरूरत है। उसे उपयुक्त संगठनों को बनाने की जरूरत है जो लोगों की एकता को एक साकार रूप देगी। इस समय, देश के अलग अलग इलाकों में, जनता अपने हकों की हिफाजत करने के लिये केन्द्रीय सशस्त्र बलों के साथ जूझ रही हैं। मजदूर वर्ग को इस बात को ध्यान में रख कर, कि आज हिन्दोस्तान में राजनीतिक सत्ता को छीनने के लिये बगावत करने का समय नही आया है, लोगों के सशस्त्र संघर्षो को देखना पड़ेगा और उनके बारे में अपना निर्णय लेना होगा। बिना आत्मगत कारक को तैयार किये, बगावत की पुकार देने से

लोगों को सत्ता में आने में मदद नहीं मिलेगी। आज के समय में संघर्ष के रूप का मुद्दा उठा कर, कम्युनिस्टों को बांटने से मजदूर वर्ग को अपने लक्ष्य के पास पहुंचने में मदद नहीं मिलती है। कुछ होगा तो यही कि स्थिति को बदलने के सिवाय आंदोलन में कट्टरपंथी गुट और पनपेंगे व बढ़ेंगे।

आन्दोलन के मुख्य राजनीतिक कार्यो को लेकर ही हिन्दोस्तान के कम्युनिस्ट अपनी एकता फिर से स्थापित कर सकतें हैं। जब मजदूर वर्ग, लोगों के सत्ता में आने के आंदोलन के नेतृत्व में आने लगेगा तो वे लोग पीछे रह जायेंगे, जो वर्तमान हालत को बचाने के लिये पूंजीवादी गठबंधनों का प्रचार करते हैं, चाहे वे "देश की एकता व अखंडता के बचाव" का नारा लेकर, या "भाजपा के खतरे को टालने" का नारा लेकर, या इस प्रकार के अन्य नारे लेकर ही क्यों न आयें।

क्रांति का मुकाम

हिन्दोस्तान में क्रांति के मुकाम के महत्वपूर्ण प्रश्न पर बहुत गलत विचार फैले हैं और इसे कम्यूनिस्ट आंदोलन में फूट डालने के लिय बार–बार इस्तेमाल किया गया हैं। शुरू में ही यह कहा जा सकता है कि अपने विचारों या पूर्वधारणाओं को थोपने से क्रांति के मुकाम को निर्धारित नहीं किया जा सकता है। हिन्दोस्तानी राजनीतिक सिद्धांत के विकास से क्रांति के मुकाम को तय किया जा सकता है, पर यह काम भी पूरा नहीं हुआ है। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों को क्रांति के मुकाम के प्रश्न के आधार पर बांटने से क्रांति की तैयारी के काम को नुकसान होगा।

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के मत के अनुसार, क्रांति के मुकाम की चर्चा का केन्द्र बिंदु है हिन्दोस्तानी समाज में पूंजीवाद की भूमिका और उसका लोकतांत्रिक संघर्ष से रिश्ता। कांग्रेंस पार्टी का मत है कि कुछ उपयुक्त सरकारी अधिनियमों और सरकारी नीतियों व कार्यक्रमों से जरुरी लोकतांत्रिक तब्दीलियां लाई जा सकती हैं। ऐसे विचार कुछ कम्युनिस्ट गुटों में भी स्थान पाते हैं जो यह धारणा पेश करते हैं कि क्योंकि हिन्दोस्तान में सामंतवादी व पूर्व पूंजीवादी रिश्तों के अवशेष मिलते हैं इसलिये हिन्दोस्तान की क्राति सरमायदार लोकतांत्रिक मुकाम पर है, जिससे, 18वीं व 19वीं सदी में बने यूरोपीय पूंजीवादी राष्ट्रों के जैसे सरमायदार राष्ट्र राज्य बन सकती हैं। इस धारणा से समझौता करने वाले अलग–अलग विचार हैं जो कम्युनिस्ट आंदोलन

में विराजमान है पर ये सब एक बात का समर्थन करते हैं कि पूंजीवाद खुद अपने आप को सुधार सकता है।

हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टों के बीच में एक धारणा व्यापक है कि हिन्दोस्तानी उपमहाद्वीप में बस्तीवादी हुकूमत का व बस्तीवादी लूट का सामाजिक आधार सामंतवाद था। इस धारणा से मुख्य निष्कर्ष यही निकलता है कि बस्तीवादी विरासत को खत्म करने के लिये सामंतवाद विरोधी संधर्ष जरूरी है। इस के आधार पर यह भ्रम पैदा किया जाता है कि 18वीं व 19वीं सदी के यूरोप की जैसी सामंतवाद–विरोधी क्रांति की जरूरत है, उस तथ्य को भुलाकर कि जो पूंजीवाद इन क्रांतियों में विजयी हो कर आया वही पूंजीवाद हिन्दोस्तान व दुनिया में बस्तीवाद बसाने के लिये भी जिम्मेदार था। यूरोप के पूंजीपति अपनी राज्य व्यवस्था हिन्दोस्तान में लाये और उसे यहां रोपा और उनकी ख्वाइश यही थी कि हिन्दोस्तानी लोग इस पूंजीवादी व्यवस्था के खिलाफ कभी न लड़ें। हिन्दोस्तानी और दुनिया के सरमायदार अनेक सिद्धान्त पेश करते हैं हिन्दोस्तानी लोगों को यह बात मानने को राजी कराने के लिये कि वे ऐसे सुधारों की मांग करें जो समाज को यूरोप के समाज के जैसा बनाये। चूंकी हिन्दोस्तानी लोगों की मुक्ति का एक आधुनिक सिद्धान्त नहीं है, इसलिये हिन्दुस्तान में, समाजवाद और कम्युनिज्म के संघर्ष को यूरोपीय रूप में पेश किया जाता है, या तो शांतिपूर्ण व ससंदीय प्रक्रिया के रूप में या एक उग्र प्रक्रिया के रूप में। पर दोनों का सार यही है कि हिन्दोस्तान में पूंजीवाद को समाज के आधार में बरकारार रख कर ही लोकतंत्र का यह विकास होगा। यह धारणा सिर्फ भा•क•पा• और मा•क•पा•में ही नही है बल्कि कई दूसरे एम–एल गुटों में भी व्यापक है।

अगर तथ्यों को ठंड़े दिमाग से परखा जाय तो यह उभर करके आयेगा कि पूंजीवाद हिन्दोस्तान में बस्तीवाद की परिस्थिति में लाया गया था और इसके साथ साथ लाई गयी यूरोप की पूंजीवादी उपरिसंरचना। वहां के सरमायदार, जिन्होने यूरोप में सामंतवादी राज्य के ऊपर विजय के आधार पर, वहां के राष्ट्रों की राज्य सत्ताओं को जन्म दिया था, उन्होंने पूंजीवादी राज्य सत्ता का प्रयोग करके हिन्दोस्तान में बस्ती जमाई। हिन्दोस्तान में पूंजीवाद का विकास बस्तीवादी राज्य सत्ता के आधार पर हुआ न कि ऐसी सरमायदार राज्य सत्ता के आधार पर जिसने सांमतवाद का दफन किया था। सांमतवाद के खिलाफ जंग करने की जगह, बस्तीवादियों ने उसे मित्र वर्ग के जैसे बचा कर रखा, बस्तीवादियों के खिलाफ लोगों के संघर्ष को दबाने के लिये। जैसे–जैसे

बस्तीवदियों ने हिन्दोस्तान में अपनी हुकूमत जमायी, वैसे–वैसे पूंजीवादी व्यवस्था भी उन्नत हुई। आज भी यही प्रक्रिया जारी है। आज जैसे जैसे मुक्त बाजार के सुधार और आई एम एफ–विश्व बैंक का समाजवाद हिन्दोस्तान पर कब्जा जमाता है वैसे वैसे पूंजीवाद हिन्दोस्तान में पैर जमाता है। सिर्फ एक ही नतीजा निकाला जा सकता है कि पिछले दो सौ साल से हो रहे बस्तीवाद और सामंतवाद विरोधी लोगों के संघर्ष को बस्तीवादी राज्य सत्ता और पूंजीवादी पद्धति ने नाकाम किया है। आज, जाति प्रथा व हर तरह की मध्यकालीन गुलामी के खिलाफ, और साम्राज्यवादी आधिपत्य व लूट के खिलाफ संघर्ष नहीं किया जा सकता है, बिना पूंजीवादी पद्धति व बस्तीवादी राज्य तंत्र के खिलाफ संघर्ष करके। दो सौ साल से, जबसे पूंजीवाद का जन्म हुआ हिन्दोस्तान में, सामंतवाद का बचना और जारी रहना, पूंजीवाद के कारण ही है, पूंजीवाद के बावजूद नहीं है।

बर्तानवी बस्तीवादियों ने खेती में जायदाद के नये सबंध लाये, बेरोक–टोक जमीन के मालिकों को हक दिये। उन्होंने जमीन को खरीदने–बेचने की अनुमति दी, निजी सम्पत्ति, और सामूहिक व निजी मिलकियत के बीच की कई तरह की जमीन की मिलकियत की प्रथा भी शुरू की। ऐसा करने से उन्होने एक तरफ पूंजीवादी निजी संपत्ति के और दूसरी तरफ भूमिहीनता के बीज बोए। उन्होंने खेती में पूंजी–श्रम मजदूरी के संबध स्थापित करने के बीज बोए। खेती के उत्पादन को दुनिया भर के व्यापार के माल के रूप में बदल दिया। उन्होने व्यापार और उत्पादन के लाइसेंसों और विशेष सुविधाओं के जरिये पूंजीपति वर्ग को जन्म दिया। ये सब तथ्य दर्शाते हैं कि सामन्तवादी सबंधों के संरक्षण से नहीं बल्कि पूंजीवादी संबंधों के लागू करने के बल पर बस्तीवादी प्रथा आधारित थी।

सालों साल में जमीनदारी वर्ग में काफी बदलाव आयें है। खेती में पूंजीवादी विकास से एक तरफ तो, बड़े–बड़े किसान उभर कर आयें हैं जो मशीनों व आधुनिक तरीके का इस्तेमाल करते हैं। दूसरी तरफ, ऐसे वर्ग भी उभर कर आये हैं जो कब्जा खो बैठे हैं, बेदखल हो गये हैं। ये लोग बर्तानवी भूमि सुधारों के जरिये अपनी काश्तकारी सुरक्षा और भुमि का हक खो बैठे और आज ग्रमीण सर्वहारा (भूमिहीन और मामूली किसान) हो गये है,जो संख्या में सबसे ज्यादा हैं। ग्रामीण पूंजीपतियों और ग्रामीण सर्वहारा के बीच में मध्यमवर्गी किसान व अन्य उत्पादक हैं जो किसी तरह अपना निर्वाह कर रहे हैं। सांमतवादी और मध्यकालीन दमन को जातिवादी दमन सहित बचा कर रखा गया

है और उसे दुबारा चालू किया गया है, जहां भी उससे पूंजीवादी शोषण और लूट करने में सहायता मिलती है, मेहनतकश लोगों को अधिकतम निचोड़ने के लिये।

कम्युनिस्ट आन्दोलन में कुछ लोग हैं जो यह मानते हैं कि पूंजीवाद से लोकतंत्र नहीं आया है। फिर भी वे यह तक्र पेश करते है कि जिन मजदूर–किसान वर्गो की मैत्री को वे बनाना चाहता हैं, वे एक ऐसे "पूंजीवादी विकास के प्रगतिशील रास्ते" पर चलेगें, जिससे मध्यम और निम्न स्तर को फायदा होगा। इस तरह वे मजदूरों को अपने शोषण के विरोध में लड़ने को मना करते हैं क्योकि मध्यम और निम्न स्तर को पहले मदद मिलनी चाहिये। मुख्य बात तो यह है कि आज हिन्दोस्तान के पूंजीवादी वर्ग अपने खुद के मुनाफे को अधिकतम करने के लिये राज्य सत्ता का प्रयोग करते हैं न कि निम्न व मध्यम वर्ग की सहायता के लिये।

मजदूर वर्ग तभी निम्न व मध्यम स्तर की सहायता कर सकता है जब वह वर्तमान राजनीतिक सत्ता की जगह एक ऐसी नयी सत्ता लायेगा जिसमें मजदूर वर्ग के नेतृत्व में, एक नयी अर्थव्यवस्था का निर्माण किया जायगा जिसमें न तो कोई निजी रूप से हड़पने का हक होगा और जिसमें न ही श्रमशक्ति एक माल के रूप में रहेगा। "पूंजीवादी विकास का प्रगतिशील रास्ता" मजदूर वर्ग का मकसद नहीं समझा जा सकता है अगर उसे हिन्दोस्तानी लोगों का, एक शोषण व दमन मुक्त समाज का निर्माण करने मे मार्गदर्शन करना है।

उदाहरण के तौर पर सी•पी•आई•(एम एल) लिबरेशन ग्रुप द्वारा अक्टूबर 1997 में वाराणसी में 6ठी कांग्रेस में निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार "साम्राज्यवाद, बड़े पूंजीपति और सामन्तवादी अवशेष अपने आप को एक पक्के अन्तर्सम्बन्ध के रूप में पेश करते हैं और आम लोग इसके बोझ से कराह रहें है। पर इस मैत्री को सिर्फ सामंतवादी अवशेषों और आम जनता के बीच मुख्य अन्तर्विरोध समझने और उसे सुलझाने से ही भंग किया जा सकता है क्योंकि सांमतवादी अवशेष, उत्पादक शक्तियों के स्वंतत्र और तीव्र विकास के रास्ते में रूकावट है। कांग्रेस में, खेती के प्रश्न पर एक नीति प्रस्ताव पारित किया गया जिसके अनुसार "पूंजीवाद का सबसे स्वतंत्र और सबसे व्यापक विकास का रास्ता–लोकतंत्र का रास्ता–सिर्फ कंगाल किसानों के आधार पर चल सकता है जिन के पास अभी कुछ भी पूंजी के साधन नहीं है। गरीब और मध्यम वर्गीय किसान ऐसे सुचारू पूंजीवादी के मुख्य कलाकार होंगे। ऐसा रास्ता पूजीपतियों और

उनकी राज्य सत्ता की खेती नीति को चुनौती देकर ही हो सकता है।"

हम साम्राज्यवाद और इजारेदार पूंजीवाद के युग में हैं जहां सर्वाधिक मुनाफा निचोड़ने में परजीवी वित्तीय पूंजी मुख्य स्थान में है और पूंजीवाद विश्वव्यापी शासन व्यवस्था बन चुका है। इस सच्चाई को इंकार कर ही ऐसी धारणा सामने रखी जा सकती है कि हिन्दोस्तान के मजदूर वर्ग और उसकी पार्टी का लक्ष्य "सुचारू पूंजीवाद" होना चाहिये और इस आधार पर उन्हें हिन्दोस्तान में "स्वतंत्र रूप व तीव्रगति से उत्पादक शक्तियों के विकास" के लिये काम करना चाहिये। अगर आम जनता साम्राज्यवाद, बड़े पूंजीपति और सामंतवादी अवशेषों के बोझ से कराह रही है तो क्या साम्राज्यवाद और बड़े पूंजीपति, कंगाल किये गये किसानों को–गरीब और मध्यवर्गी किसानों को–"सुचारू पूंजीवाद" में "मुख्य कलाकार" बनने देगें। साम्राज्यवाद और बड़े पूंजीपति, अपने नियन्त्रण में पूंजी के साधनों को, कंगाल किसानों के लिये क्यों उपलब्ध नहीं करा रहे हैं? इसको उलटने के लिये कंगाल किसानों को बड़े पूंजीपतियों से पूंजी छीनकर अपने लिये उपलब्ध करना होगा। सच में, आज यही "लोकतंत्र का रास्ता" होगा क्योंकि यह बहुसंख्यकों के हाथ में राजनीतिक सत्ता के आधार पर होगा, जो इसके जरिये बहुसंख्यकों के भले के लिये, उत्पादक शक्तियों का विकास करेंगे। यह "सुचारू पूँजीवाद" से नहीं होगा, बल्कि आज के बड़े पूंजीपतियों के हाथ की पूंजी छीन कर, उसको सामाजिक सम्पत्ति बनाने से होगा।

कम्युनिस्टों और अगुवा मजदूरों को आज यह चर्चा करनी चाहिये कि, क्या सामंतवादी अवशेषों के विरुद्ध संघर्ष में, साम्राज्यवादियों और बड़े पूंजीपतियों द्वारा सामंतवादी अवशेषों को दी गई सहायता से बाधा नहीं पड़ती है, और क्यों नहीं मजदूर वर्ग और हिन्दोस्तान के लोग, पहले से ही, अपना संघर्ष साम्राज्यवाद और बड़े पूंजीपतियों के खिलाफ चलायें और उन्हें हरा कर सामंतवादी अवशेषों को भी खत्म करें। आज हिन्दोस्तान को मिलाकर दुनिया के किसी भी हिस्से में, साम्राज्यवाद व विश्व सरमायदार के बिना सामंतवाद के अवशेष कुछ भी नहीं हैं। चाहे सामंतवाद को पहले ही चकनाचूर किया हो या नहीं, साम्राज्यवाद व विश्व सरमायदार लोगों के मुख्य शत्रु हैं। "सरमायदारों और राज्य सत्ता की कृषि नीति को चुनौती देना" का आज मतलब है, हिन्दोस्तानी बड़ी पूंजी व साम्राज्यवाद के कच्चे माल व अनाज की जरूरत पूरी करने वाली कृषि नीति के खिलाफ, किसानों के संघर्ष के नेतृत्व में आने के लिये मजदूर वर्ग को संगठित करना। सच तो यह है कि अभी जारी कृषि नीति देहातों में एक

"सुचारू पूंजीवाद" पैदा कर रही है जिसके ऐसे लक्ष्यण हैं जैसे, खेती में व्यापारी माल के रिश्ते, कर्ज की शुरूआत, मशीनीकरण और खाद का प्रयोग, आदि। इस प्रक्रिया में, ग्रामीण सर्वहारा के साथ–साथ छोटे व मध्यवर्गी उत्पादकों को भी निचोड़ा जा रहा है। जाहिर सामंतवादी अवशेष इस नीति को नहीं चला रहे हैं बल्कि, कुछ हद तक, इस नीति से फायदा पा रहे हैं और यह नीति साम्राज्यवाद व हिन्दोस्तानी बड़ी पूंजी द्वारा थोपी जा रही है।

हिन्दोस्तान, में अलग–अलग रूप में सामाजिक उत्पादन पहले से ही मौजूद है। बड़े पैमाने से उत्पादन सामाजिक आधार पर होता है पर उत्पादन के साधनों की मिलकियत और उत्पाद की उपलब्धि, दोनो ही, नीजि रूप से है। दूसरी तरफ, जमीन, बाग व उपवनों की सामूहिक मिलकियत भी काफी जगहों पर आज तक जारी है। आदिवासी लोग अपनी विरासती जमीन को अपनी सामूहिक दौलत मानते हैं, हालांकि, हिन्दोस्तानी सरकार ने इसे राज्य की संम्पत्ति घोषित की है। मजदूर वर्ग सबसे ज्यादा चाहता है कि, जहाँ उत्पादन पहले से ही सामाजिक है, वहाँ उत्पादन साधनों की निजी मलकियत खत्म की जाये ताकि, उनका फायदा कंगाल किसानों को मिले। किसानों को ऐसी सहूलियत से बड़े पूंजिपतियों और साम्राज्यवादियों ने वंचित रखा है। मजदूर वर्ग आदिवासी लोगों की जीविका कमाने वाली विरासती जमीन, उनको तुरन्त उपलब्ध करायेगा। इसके साथ–साथ, बड़े पैमाने के उत्पादन की निजी मलकियत के खत्म करने से उपलब्ध फायदे से, मजदूर वर्ग उन्हें और सहायता देगा जिससे वे उत्पादन शक्ति का विकास कर सकें और अपनी हालातों को तेजी से बेहतर कर सकें। जहाँ यह मौजूद है उन किसानों की सामूहिक जमीन की मलकियत को मजदूर वर्ग ज्यों का त्यों छोड़ देगा। परन्तु पहले किसानों को सामंतवादी अवशेषों के शिकंजों से छुड़ा कर मदद करेगा और दूसरा, सामूहिक जमीन पर आधुनिक बड़े पैमाने का उत्पादन लाने में मदद करेगा, ताकि गांवों में उत्पादन शक्ति का बहुत तेजी से विकास हो। शुरूआत के लिये बड़ी पूंजी और साम्राज्यवादियों द्वारा स्थापित, अतिरिक्त उत्पादन को हड़पने की व्यवस्था को उखाड़ फेकने से, मजदूर वर्ग छोटे उत्पादकों के साधनों की कमी की समस्या को खत्म करेगा और उचित समय पर उन्हें समाजवादी आर्थिक व्यवस्था की रचना करने में नेतृत्व देगा।

सी•पी•आई• (एम•एल•) लिबरेशन की 6ठी कांग्रेस के अनुसार "सर्वहारा पार्टी की कृषि नीति का केन्द्रीय लक्ष्य होगा गाँवों में वर्ग संघर्ष को तीव्र करना : एक तरफ, नये व

पुराने जमीनदार व कुलाक और उनकी राज्य सत्ता, और दूसरी तरफ, ग्रामीण सर्वहारा और गरीब किसानों की विशाल जनता।" और शब्दों में, गाँवों में पूंजीवाद के विकास को ध्यान में रखते हुऐ, वर्ग संघर्ष का खास लक्ष्य है मेहनतकश लोगों का धनी वर्गो से संघर्ष। परन्तु अगर संघर्ष श्रम और पूँजी के बीच का है तो अपना नजरिया सिर्फ "सुचारू पूंजीवाद" तक ही क्यों सीमित रखना है जिसकी हिमायत मध्यवर्गी किसान करेंगे? क्यों नहीं मेहनतकश अपने वर्ग का नजरिया सामने रखे, राजनीतिक सत्ता लोगों के हाथ में लेने का नजरिया, जिससे वह सभी सामंतवादी अवशेषों, दमन, ऋण से बंधे श्रमिकों की गुलामी आदि को चकनाचूर करे और उत्पादन को ऐसा संगठित करे कि यह खुद के लिये और समाज की जरूरत के लिये अनुकूल हो।

आज के हिन्दोस्तान में कृषि क्रांति के आर्थिक सार को "सुचारू पूंजीवाद" की तरह परिभाषा देना हिन्दोस्तान की जमीन में यूरोप की तरह की लोकतांत्रिक क्रांति लाने के नजरिये पर आधारित है। कांग्रेस पार्टी द्वारा समर्थित व कार्यान्वित भूमि सुधार का आधार भी हिन्दोस्तान के गाँवों में "सुचारू पूँजविाद" पैदा करना है। भाकपा और माकपा के नेताओं ने भी ऐसी कृषि नीति का समर्थन किया है और उसे लागू किया है, जहाँ–जहाँ वे सत्ता में रहे हैं। सी•पी•आई (एम•एल•) लिबरेशन की 6ठी कांग्रेस अपने आप को संसदीय कम्युनिस्ट पार्टियों से अलग दिखाने की कोशिश करता है इस घोषणा से कि "हमारी कृषि नीति का रास्ता, नौकरशाही, वैधानिक और सुधारवादी रास्तों से अलग एक क्रांतिकारी रास्ता है।" "सुचारू पूँजीवाद" को प्रोत्साहन देने के लिये जमीन छीनने का एक लड़ाकू संघर्ष करना, एक उभरते पूंजीपति को लुभा सकता है, असुरक्षित गरीब किसानों के बलबूते पर अपने प्रतिद्वन्दी की जमीन हड़पने में। पर यह मजदूर वर्ग का लक्ष्य नहीं हो सकता, जो एक नई राजनीतिक सत्ता और आर्थिक संबंध बनाना चाहते हैं, प्रस्थापित राज्यसत्ता के संबंधों के विरोध में किसानों के संघर्ष का नेतृत्व देकर।

एक बार यह मान लिया जाता है कि बस्तीवाद के बाद हिन्दोस्तान में पूंजीवाद का ही विकास हुआ था और अभी भी हो रहा है, तो यह जाहिर है कि बस्तीवादी विरासत खत्म करने का संघर्ष पूँजीवाद के विरोध में होना जरूरी हैं। दक्षिण एशिया में पूंजीवाद बस्तीवादी विरासत का ही हिस्सा है और दूसरे सभी तरह के दमन की भी जड़ है। इसीलिये, वर्ग संघर्ष न केवल सामंतवाद विरोधी, बस्तीवाद विरोधी और साम्राज्यवाद विरोधी है बल्कि, और सबसे महत्वपूर्ण, पूंजीवाद विरोधी भी है। हिन्दोस्तान के मजदूर,

किसान, महिलाऐं और युवक राजनीतिक तौर पर पूंजीवाद व पूंजीवादी सुधारों के खिलाफ, पूंजीवादी राज्य सत्ता के खिलाफ और साथ–साथ सामंतवादी दमन के खिलाफ, जाति और लिंग पर आधारित दमन के खिलाफ, राष्ट्रीय दमन के खिलाफ, मानव अधिकार के नकारने के खिलाफ एक हो सकते हैं, और होना भी चाहिये। हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग, दूसरे लोगों की विजयी क्रांति के निष्कर्ष से सीख लेकर, अपने आप को आज के समाज को बदलने की तैयारी के काम से गुमराह नहीं होने दे सकता है। इन निष्कर्षो पर पूरा ध्यान देते हुए, मजदूर वर्ग अपना काम करते हुए, हिन्दोस्तानी क्रांति के मुकाम की पूरी परिभाषा दे सकेगा।

हिन्दोस्तानी सरमायदार के तौर तरीके

इस सबसे महत्वपुर्ण सवाल पर हिंदोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन में बहुत बड़े और व्यापक पैमाने पर भ्रम फैला हुआ है। इस भ्रम को बढ़ावा देने में उन लोगो का बहुत बड़ा योगदान रहा है, जो हिन्दोस्तानी सरमायदार और हिन्दोस्तानी राज्य को "साम्राज्यवाद–विरोधी" और "धर्मनिरपेक्ष तथा जनवादी" करार देते है, जो हिन्दोस्तानी सरमायदार को "कॉम्प्राडोर" सरमायदार और विदेशी साम्राज्यवादी ताकतों का ऐजंट करार देते है।

हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग जो पिछले पचास साल से अधिक समय से, करीब एक अरब की जनसमुदाय वाले एक बड़े उपमहाद्विप राज्य पर हुकूमत चला रहा है, अपने लिए विस्तारवादी और साम्राज्यवादी मकसद रखता है।

शीतयुद्ध के दौर में, हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग ने, गुट–निरपेक्षता के नाम पर, दोनों महाशक्तियों के बीच आपसी मतभेदों का इस्तेमाल करके, खुद बड़ी ताकत बनने का प्रयास किया। आज जब इन दो ध्रुवों में विभाजन का दौर खत्म हो चुका है, तो हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग के सामने यह चुनोती खड़ी है कि आज की परिस्थितीयों में वह किस तरह से बड़ा खिलाड़ी बन कर उभरें। हिन्दोस्तानी सरमायदार आज निश्चित तौर पर विश्व साम्राज्यवादी सरमायदारी वर्ग का अटूट हिस्सा बन चुका है, और उसका लक्ष्य तथा तरीके भी अन्य देश के सरमायदार वर्ग जैसे ही हैं। अपने देश ओर विदेश के बाजारों को हड़पने के लिए वह पूरी तरह से अंतर–साम्राज्यवादी विरोधों और अंतर–साम्राज्यवादी झगड़ों में घुलमिल गया है। आपसी सहयोग और

स्पर्धा जो की विश्व सरमायदारी व्यवस्था का अभिन्न अंग है, उन गलत निर्णयों की जड़ में है, जो कभी हिन्दोस्तानी सरमायदार के "बिकाऊ" तो कभी "राष्ट्रवादी" रूप बताये जाते हैं।

हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग का जन्म उन लोगों से हुआ था जिन्होंने, बस्तीवादियों के साथ हाथ मिलाया और बदले में ज़मीन, जायदाद और लायसंस इत्यादि हासिल किये। बर्तानवी बस्तीवादी शासन खत्म होने के पश्चात ये सरमायदार बस्तीवादी अवशेषों की रक्षा करते हुए काफी फले फूलें है। इनमें सैन्य–नौकरशाही संस्थान और राजनीतिक ढांचा है जो कि हिन्दोस्तानी लोगों को राजनीतिक सत्ता से वंचित रखने के लिए बनाया गया था। अलग–अलग राष्ट्र, राष्ट्रीयताओं और हिन्दोस्तान के अन्य लोग जिनका अस्त्वि हिन्दोस्तानी संघराज्य में नकारा गया है, इनके मामले में हिन्दोस्तानी सरमायदार साम्राज्यवादी और बस्तीवादी तरीके से पेश आये हैं और अपनी हुकूमत उन लोगों पर वहशी ताकत के जरिये मजबूत की हैं। इसलिए हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग को किसी भी तरह से जनतांत्रिक करार देने में रत्तीभर भी सच्चाई नहीं है।

हिन्दोस्तानी सरमायदार को "कॉम्प्राडोर" वर्ग करार देना भी सच्चाई से हटकर है। यह इस तरह की धारणा पैदा करता है जैसे की हिन्दोस्तानी सरमायदार के पास न तो कोई अपनी पहल, या रणनीती है और न ही कोई अपना लक्ष्य, क्योंकि इसने "उदारीकरण और निजीकरण" की नीति, आर्थिक पुनर्रचना, इत्यादि अतंर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाओं के कहने पर स्वीकार किया है। लेकिन हकीकत यह बताती है की 1950 का नेहरूवी "समाज का समाजवादी नमूना" और 1990 के दशक में राव और मनमोहनसिंह का उदारीकरण और निजीकरण कार्यक्रम, आर्थिक विकास के ये दोनो ही दांवपेच, हिन्दोस्तानी सरमायदार के इशारे पर बनाये गये और अमल में लाए गये। चुने हुए क्षेत्रों का निजीकरण और "समांतर खेल का मैदान" जैसे नारे भी हिन्दोस्तान के इजारेदार सरमायदारों के कहने पर ही उठाए जा रहे है। उसी तरह बीमा कंपनियों और बैंकिंग क्षेत्र के उदारीकरण का विरोध भी हिन्दोस्तानी सरमायदारों के एक बड़ी ताकत के रुप में उभरने की जरूरत से प्रेरित है।

हिन्दोस्तानी अर्थव्यवस्था की दिशा के लिए विदेशी तकतों और संस्थाओं को दोष देना, हिन्दोस्तानी सरमायदार वर्ग के हित के अनुरूप है। कुछ लोगों में इससे यह भ्रम पैदा

होता है कि हिन्दोस्तानी सरमायदार साम्राज्यवादी ताकतों का शिकार है। लेकिन हिन्दोस्तानी सरमायदार, साम्राज्यवाद से अपने संबंधो के इन रूपों का इस्तेमाल, लोगों को यह विश्वास दिलाने के लिए करता है कि, हिन्दोस्तान के पास अंतर्राष्ट्रीय लहर के साथ जाने के अलावा और कोई चारा नहीं है। यह सोच इस बात को भी छुपाती है कि हिन्दोस्तानी सरमायदार जान बूझकर यह रास्ता अख्तियार कर रहा है,जो कि उसके एक बड़ी ताकत बनने और उसके असर के क्षेत्र को बढ़ाने के लिए बनाया गया है, उसके फलस्वरूप हिन्दोस्तानी समाज का चाहे जो हश्र हो।

कम्युनिस्टों की एकता की पुनःस्थापना

जब कि हिन्दोस्तान की करीब–करीब सभी कम्युनिस्ट पार्टियां लोकतांत्रिक केन्द्रीयवाद के सिद्धान्त में विश्वास रखने का दावा करती है, सच्चाई इस दावे को सिद्ध नहीं करती। हिन्दोस्तान की धरती पर हकीकत यह है कि, ऐसी कोई एक आम दिशा नहीं है जिसके आधार पर हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट संगठित हुए है। वाकई में ऐसी कई दिशाएं, विचार और धाराएं मौजूद हैं, जिन के आधार पर कम्युनिस्ट बंटे हुए है–पार्टियों के भितर, और पार्टियों के बीच। संकीर्णतावाद इतने व्यापक रूप से फैला हुआ है कि हर पार्टी या गुट इस बात का दावा करता है कि अगर कोई दस्तावेज़ उनकी दिशा का वर्णन करता है, तो वे उन्ही के साथ चर्चा करेंगे जो उस दस्तावेज को स्वीकार करते हैं। विचारधरात्मक संघर्ष के नाम पर, हर गुट अन्य गुटो और पार्टियों को लेबल करता हुआ यह साबित करने की कोशिश करता है कि उसकी दिशा और कार्यक्रम ही अतिशुद्ध और सबसे बढ़िया है।

1964 में जब भा•क•पा• को तोड़कर मा•क•पा• का जन्म हुआ तबसे कम्युनिस्ट एकता का लगातार विघटन और कम्युनिस्ट विचारधारात्मक संघर्ष के स्थान पर संकीर्णतावादी लड़ाई का बढ़ना, हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन की पहचान रही है।

किसी एक प्रमुख व्यक्ति के इर्दगिर्द पंथ संगठित करना, यह सरमायदार, उद्योगपति और जमींदारों का तरीका है। इस तरीके का इस्तेमाल निम्न सरमायदार भी करता है। जब कि सामूहिक चेतना और अपने वर्ग एवं मित्र वर्गो की सामूहिक ताकत के आधार पर संगठित करना, यह तरीका मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट आंदोलन का तरीका है। सरमायदारी और निम्न–सरमायदारी संगठनों में निर्णय लेने के अधिकार केवल कुछ

चुने हुए लोगों के हाथ में होता है। कम्युनिस्ट पार्टी में यह अधिकार, समूह में बसा होता है और उसके सुपुर्द रहता है। कम्युनिस्ट पार्टी के सारे सदस्य ही सबसे महत्वपूर्ण होते है। यह सिद्धान्त संगठन के लोकतांत्रीक केंद्रीयवाद का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त है।

हिन्दोस्तानी की कई कम्युनिस्ट पार्टियों में लोकतांत्रीक केन्द्रीयवाद को, केन्द्रीय कमीटी और पॉलीट ब्युरो के आधिपत्य को पार्टी की अन्य इकाईयों पर थोपने मात्र तक, सीमित कर दिया गया है। पार्टी कांग्रेस ही पार्टी की सर्वोच्च ईकाई है, जो पार्टी के उन सारे सदस्यों की प्रभुसत्ता का समावेश है, जो कि पार्टी की मूल इकाइयों में संगठित हैं। इस सिद्धान्त का इन लोगों ने कई बार उलंघन किया है, जो कि दिखावे के लिए लोकतांत्रीक केन्द्रीयवाद में विश्वास रखने का दावा करते हैं

अविभाजीत भा•क•पा•की पहली कांग्रेस, उसकी स्थापना के करीब 20 साल बाद 1947 में बुलाई गई। यह बस्तीवाद–विरोधी संघर्ष का दौर था, और पार्टी के संगठन बांधने, राजनैतिक दिशा तथा कार्यक्रम प्रस्थापित करने, और मजदूर वर्ग को संगठित करने संबंधीत कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन में संगठन संबंधित पेचीदा सवालों की जड़, उन दिनों उभरी कम्युनिस्ट परंपरा में देखी जा सकती है। जैसे कि सभी जानते है कि उस दौर में और उसके पश्चात भी, भा•क•पा• के अंतर्गत कई "दिशाए" उभर कर आई, जैसे कि रणदिवे लाईन, डांगे लाईन, सुंदरैया लाईन, इत्यादि। बुनियादी संगठनों ने या फिर भा•क•पा• की कांग्रेस ने इस प्रवृति का खत्म नहीं किया, और न ही अपनी प्रभुसत्ता का पार्टी नेतृत्व पर इस्तेमाल किया। 1964 में इनमें से कुछ नेताओं ने भा•क•पा• को तोड़कर मा•क•पा• की स्थापना की। इनमें से किसी भी गुट ने यह जरूरत महसुस नहीं की, कि हिंदोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन को मजबूत करने के उद्देश्य से कठीन सवालों को हल करने के लिए पार्टी की कांग्रेस बुलाई जाए। बल्कि उन्होंने पहले पार्टी को विभाजित किया और उसके लिए कई तरह के कारण बताए गये। उसके पश्चात जिन्होंने मा•क•पा• बनाई, उन्होंने इस विभाजन को प्रमाणित करने के लिए अपनी ही कांग्रेस बुलाई। सबसे दुख की बात यह है कि, मा•क•पा• की दिशा भा•क•पा• की दिशा से बिल्कुल भी अलग नहीं थी। जब सब कुछ स्थिर हो गया, तो दोनो ही पार्टियों ने अपने आप को मजदूर वर्ग के अगुवा संगठन के बजाए चुनावी यंत्रों में तब्दील कर दिया, और सचेत नीति तथा उपाय द्वारा क्रांति के लिए आत्मगत परिस्थिति का निमार्ण करने के बजाय, मजदूर वर्ग के स्वचलित और बचावी संघर्षो में हिस्सा लेती रही।

उस समय से आज तक कम्युनिस्ट आंदोलन में अधिकतर विभाजन, लोकतांत्रीक केंद्रीयवाद के मूल सिद्धान्त का उलंघन करने से हुआ है। पार्टी सदस्यों की प्रभुसत्ता की जगह पार्टी और गुटों के नेताओं के प्रभुत्व ने ली, जिन्होंने अपने मतभेद पार्टी के बुनियादी संगठनों या कांग्रेस के द्वारा सुलझाने की जरूरत नहीं समझी। इन सब बातों से संबंधित सभी लोग इस धारणा से चले कि केंद्रीय कमीटी या पॉलीट ब्युरो ही सबसे निर्णायक है, और पार्टी के बुनियादी संगठन उसके अधीन हैं, जबकि पार्टी कांग्रेस एक मोहर मात्र है। पार्टी कांग्रेस और सदस्यों की प्रभुसत्ता की ओर इस तरह के नज़रीयें से हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग हर स्तर पर कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व से वंचित रहा चाहे वह देशव्यापी लक्ष्य की बात हो, या फिर बुनियादी संगठनों के स्तर पर जरूरी चेतना और संगठनात्मक मजबूती का मामला हो।

संकीर्णतावाद का जहर इस हद तक फैला हुआ है कि कई कम्युनिस्ट गुट और पार्टियां इस ढंग से पेश आती है जैसे कि सरमायदारी राज्य को खत्म करके समाजवाद की स्थापना करने के लिए मजदूर वर्ग और आम मेहनतकश लोगों का संघर्ष उनके लिए चिंता का मुख्य विषय नही है। उनका कहना है कि सरमायदारी शासन का तख्ता पलट नहीं किया जा सकता क्योंकि कम्युनिस्ट मजबूत नहीं है। वे अन्य कम्युनिस्ट गुटों से मिलकर, मजदूर वर्ग का लक्ष्य हासील करने के लिए उसका नेतृत्व देने काबील एक ताकत नहीं खड़ी कर सकते,क्योंकि उनके आपस में कई "गंभीर" विचारधारात्मक मतभेद हैं, जो की पहले हल किये जाने चाहिए। मा•क•पा• खासकर यह कहती है और एक लंबे अरसे से कहती आयी है। कई और गुट भी यह राग आलाप रहे है।

ऐसा महसूस होता है, जैसे कि इन गुटों और पंथों का मुख्य कार्यक्रम यह है कि किस तरह से अपने सदस्यों को कड़े नियंत्रण में बरकरार रखा जाए और किन तरह से अन्य गुटो से आपसी झगड़े चलाए जाए। इस मामले में ऐसा आभास होता है कि अन्य कम्युनिस्ट गुट और अपने गुट के अंतर्गत नेतृत्व को चुनौती देने वाले ही सबसे मुख्य दुश्मन है। इस गुटवादी और संकीर्ण भावना के दबाव में मजदूर वर्ग नेतृत्वरहित और भ्रमीत पड़ा हुआ है। क्रांति अपने पल गिनती रहती है। सरमायदार दिन–प्रतिदिन मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगों पर वहशी आक्रमण करता है। कम्युनिज़्म लोगों के दिलों मे केवल एक ख़्वाब बनकर रह जाता है, जिसको हक़ीकत में हासिल नहीं किया जा सकता।

कम्युनिस्ट पार्टी में गुटों का आस्त्वि इस बात का संकेत है कि पार्टी अब मजदूर वर्ग की पार्टी नहीं रही। लेनिन और स्टालिन ने पार्टी में गुटबाजी को खत्म करने की जरूरत पर ज़ोर दिया। यह किसी पुलिसी तरीको के जरीये नहीं बल्कि मजदूर वर्ग के एकमात्र कार्यक्रम की हिफाजत के लिए निरंतर विचारधारात्मक संघर्ष चलाकर किया जाना चाहिए, ताकि सरमायदार वर्ग के लिए मजदूर आंदोलन और उसकी हिरावल (अगुवा) पार्टी में अपना कार्यक्रम घुसपैठ करना असंभव हो।

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट गदर पार्टी का कम्युनिस्टों को संगठित करने का 18 वर्ष का गौरवपूर्ण इतिहास है। इस दौरान एक ऐसी परंपरा कायम की गई है, जिसके मुताबिक काम की जगह–फैक्ट्रियों में, और खेतों में–बुनियादी संगठनो के द्वारा सदस्यों की प्रभुसत्ता अमल मे लाई जाती है, और एक योजना के तहत वर्ग संघर्ष छेड़ने के लिए पार्टी के मुखपत्र और साधन बांधे गये हैं। किसी भी तरह का गुटबाजी संघर्ष या दो–दिशाओं का संघर्ष पार्टी को अपनी राह से पथभ्रष्ट करने के लिये घुस नहीं पाया है। उसके बुनियादी संगठन वर्ग संघर्ष को अपना साधन बनाकर काम कर रहे हैं, और एक नये तरह की कम्युनिस्ट राजनैतिक कार्यशैली पैदा कर रहे हैं, जो न तो स्वचलन पर आधारित है और न ही प्रतिकारक है।

यह बात साफ है कि कम्युनिस्ट एकता की बहाली के रास्ते में कई रूकावटें है। एक ऐसी क्रांतिकारी दिशा का अभाव है जिसके इर्दगिर्द सारे कम्युनिस्ट एक पार्टी मे इकट्ठा हो सके। एक लंबे अरसे तक लोकतांत्रिक केंद्रीयवाद को विकसित करने और उसको बचाकर रखने में नाकामयाबी की वजह से कम्युनिस्ट राजनैतिक कार्यशैली का भी अभाव है। लेकिन इस सब के अलावा, कम्युनिस्ट आंदोलन की एकता को बहाल करने का मतलब होगा कि, वास्तविक तौर पर विचार और काम की एकता के आधार पर, मजदूर वर्ग को नेतृत्व देने के लिए हिन्दोस्तान के सभी कम्युनिस्ट, एक कम्युनिस्ट पार्टी में लामबंध हों और उसमें संघर्ष चलाएं।

हमारी पार्टी इस सवाल पर किस नजरीये से पेश आती है, उसे संक्षिप्त रूप में इस ढंग से रखा जा सकता है।

- हम यह दृढतापुर्वक मानते हैं कि हिन्दोस्तान में कम्युनिस्ट आंदोलन एक है। और हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी उस आंदोलन का एक दस्ता है, जिसमें और

भी पार्टियां व गुटों के अलावा ऐसे कम्युनिस्ट हैं जो किसी पार्टी या गुट में शामिल नहीं हैं।

- हम इस बात में विश्वास करते हैं कि इन पार्टियों, गुटों और कम्युनिस्टों से एक संयुक्त कम्युनिस्ट पार्टी उभरेगी, और यह कार्य कम्युनिस्ट राजनैतिक कार्य को मजबुत करके, तथा उन सब धाराओं को नकारकर होगा जिन्होंने मजदूर वर्ग को अपना लक्ष्य तय करने में नाकाम किया है।

- हम यह वैचारिक संघर्ष उस एक कम्युनिस्ट आंदोलन के अंतगर्त चला रहे है, और इसका निशाना वह है जो हर सवाल पर–वैचारिक–राजनैतिक सवाल और पार्टी बनाने के सवाल पर–सोशल डेमोक्रेसी से हाथ मिला रहे है।

- हमारा मकसद किसी गुट या व्यक्ति को बदनाम करना नही है, बल्कि यह निश्चित करना है कि हर एक गुट या ताकत की राजनैतिक दिशा और विचारधारा सभी कम्युनिस्टों के सामने विवेचनात्मक ढंग से निर्धारित की जाये।

- हम आम दिशा पर विस्तार करते हुए हिन्दोस्तानी परिस्थितीयों के आधार पर, हिन्दोस्तानी लोगों की मुक्ति का सिद्धान्त विकसित करेंगे और लोगों की हाथों में सत्ता हासिल करने का कार्यक्रम विकसित करने के लिए मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगों को संगठित करेगें, एक ऐसा कार्यक्रम अपनायेंगे जो उन सभी कार्यक्रमों से अलग होगा जो कि आज की परिस्थिति को बनाये रखने के कार्यक्रम हैं।

- सभी कम्युनिस्ट गुटो, संगठनों तथा व्यक्तियों से इस आधार पर चर्चा चलाना होगा कि सोशल डेमोक्रेसी से हर तरह के समझौते का विरोध हो और मार्क्सवाद–लेनिनवाद की शुद्धता की हिफ़ाज़त हो, और कम्युनिस्ट आंदोलन में आज हम ऐसी कोई सीमारेखा न ड़ाले, या किसी पार्टी को गैर–कम्युनिस्ट करार न दें।

- हम चाहते हैं कि सभी कम्युनिस्ट, वे चाहे अपने संगठन में किसी भी स्तर पर हो, ऐसी चर्चा और संवाद में हिस्सा लें, जो कि हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग और उसके लक्ष्य को गर्वित करे, और हर तरह की गपशप, गाली गलोच, और संदेह का विरोध करें।

- हम सभी कम्युनिस्टों को एक मोर्चे मे लाना चाहते हैं। यह ऐसी परिस्थिति को जन्म देगा जहां सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट यह तय कर पायेंगे की उनका कार्यक्रम क्या हो और अपनी संयुक्त पार्टी को क्या नाम दें।

विचारधारात्मक–राजनैतिक एकता के आधार पर एक कम्युनिस्ट पार्टी बनाने के दौरान, हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी (सी•जी•पी•आई•) का यह मानना है कि सरमायदारी व्यवस्था और सरमायदारी सुधार, राज्य के आतंकवाद और क्रेंद्र सरकार के अत्याचार के खिलाफ सभी समविचारी पार्टियों, गुटों और व्यक्तियों की व्यापक राजनैतिक एकता बनाने का भी आधार मौजूद है। लिंग और जाती के आधार पर भेदभाव की खिलाफत, मानव अधिकार, राष्ट्रीय एवं जनवादी अधिकार, तथा महिलाओं के अधिकारों के लिए भी व्यापक राजनैतिक एकता बनाने की संभावना मौजूद है। कम्युनिस्ट गुटों और अन्य लड़ाकू ताकतों की राजनैतिक एकता बनाने के लिए सीजीपीआई संयुक्त कार्य और अपील के जरिये अपना काम आगे बढ़ायेगी और हर समय सैद्धांतिक और विचारधारात्मक सवालों पर खुली चर्चा और संवाद बनाये रखने में सहायक रहेगी।

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट गदर पार्टी यह जानती है की इसकी विपरीत धाराएं भी आज हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन में मौजूद है। यह धारा है, सरमायदारी पार्टियों के साथ गठजोड़ बनाने की है, सभी कम्युनिस्टों से विचारविमर्श किये बिना, संसद में कुछ बड़े नेताओं के आपसी "संयुक्त जाहिरनामा" निकालने की। मा•क•पा• के नेतागण इस धारा का सबसे स्पष्ट उदाहरण हैं, जो अन्य किसी "छोटी" कम्युनिस्ट पार्टी के साथ बैठने से इंकार करते हैं और ऐसा अहंकार व उद्दंडता से पेश आते है, जैसे कि वे कोई नेता या चाणक्य हों जिनका सरमायदारी मण्डली में बहुत भाव हो। सीजीपीआई सभी हिन्दोस्तानी कम्युनिस्टो को, जिसमें मा•क•पा• के भी कम्युनिस्ट शामिल हैं, जो हिन्दोस्तान में समाजवाद और कम्युनिज्म की चाह रखते है, यह बुलावा देती है कि, कम्युनिस्टों के बीच इस सरमायदारी और ब्राम्हणवादी अहंकार की धारा को नष्ट करें।

अगर मा•क•पा• का नेतृत्व यह सोचता है कि हिन्दोस्तान में कम्युनिज़्म का प्रतिनिधित्व करने का हक केवल उसको है तो फिर उसका कर्तव्य है कि इस ढंग से पेश आये जो कम्युनिस्ट आंदोलन के एक बड़े दस्ते को शोभा दे। मा•क•पा• के अगुवा संगठनों में जो गुटवादी संघर्ष चल रहा है, और जो लोगों की नजरों मे आया है, किसी

भी तरह से कम्युनिज़्म के नाम और इज़्ज़त को रोशन नहीं करता। अगर मा•क•पा• एक गंभीर राजनैतिक पार्टी है, जिसका लक्ष्य समाजवाद और कम्युनिज़्म है, तो उसे अपनी भूमिका और बर्ताव सभी कम्युनिस्टों के सामने खुलकर समझाना चाहिये। उसे अपनी आम दिशा को विस्तृत करके उसे मजबूत करना चाहिए, और यह बात स्पष्ट करनी चाहिए कि हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग के विकल्प लक्ष्य को प्रस्थापित करने के लिए वह क्या कर रही है, तथा मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगों की राजनीतिक उदासीनता को खत्म करने के लिए, और सरमायदार वर्ग के आर्थिक पुनर्गठन के कार्यक्रम को मात देने के लिए किस तरह से संघर्ष चला रही है। उसे यह बात भी स्पष्ट करनी चाहिए की इस समय सरमायदारी गठजोड़ों में कम्युनिस्टों का हिस्सा लेने से और उसका नेतृत्व करने से मजदूर आंदोलन को क्या फायदा होगा, मजदूर वर्ग के कौन मित्र है और कौन दुश्मन, इस बारे में उनके क्या विचार है और उनकी "धर्मनिरपेक्ष और जनवादी" नीति के जरिए किस तरह से मजदूर वर्ग के लक्ष्य के पीछे मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगो की एकता सचेत ढंग से बांधी जा रही है।

सीजीपीआई और अन्य कम्युनिस्टों का हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन की आम दिशा प्रस्थापित करने का कार्य, सोशल डेमोक्रेसी से गठजोड़ करके परिस्थिति को बदलने से रोकने की कोशिश करने वालों के खिलाफ विचारधारात्मक और तार्किक संघर्ष के साथ–साथ चलेगा। फौरी तौर का काम है मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगों का अपना कार्यक्रम बनाने में और उस कार्यक्रम को अमल में लाने के लिए लोगों का क्रांतिकारी मोर्चा बनाने में अगुवाई देना। जैसे–जैसे यह काम बढ़ेगा, जो कोई प्रगति की तमन्ना रखते है वे एक पक्ष में लामबंध होंगे और सरमायदारों के साथ गठजोड़ तथा समझौता करने वाले पिछे रह जायेंगे। हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट आंदोलन फिर से एक संयुक्त और शक्तिवर्धक ताकत के रूप में 21वीं शताब्दी मे सरमायदारी हुकुमत के खिलाफ जंग का नेतृत्व करने के लिए उभरकर आयेगा जब क्रांति पीछे हटना रोक कर फिर आगे बढ़ेगी।

भाग ३

कार्य की योजना

हमारी पार्टी का काम अब एक निश्चयात्मक मुकाम पर आया है, जहां हमने पिछले 17 सालों में कई जीत और उपल्बधियां हासिल की हैं। गुणात्मक प्रगति करने के लिए एक निर्णायक कदम लेने की जरूरत है। लेकिन यह निर्णायक कदम अपने आप नहीं आयेगा। इसको हमें एक योजनाबद्ध तरीके से संगठित करना होगा। हमारे पूरे कार्य की योजना पार्टी और हिन्दोस्तानी मजदूर वर्ग की यह निर्णायक जीत सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रेरित है।

हमने अपने सामने मजदूर वर्ग के स्वतंत्र कार्यक्रम के इर्दगिर्द मजदूर, किसान और सभी मेहनतकश लोगों का क्रांतीकारी संयुक्त मोर्चा बनाने के साथ–साथ कम्युनिस्ट एकता की पुनः स्थापना का कार्य मजबूत करने की चुनौती रखी है। इस काम को पूरा करने के लिए क्या करना जरूरी है?

मजदूर और मेहनतकश लोगों में पार्टी के बुनियादी संगठन बनाने के लिए संघर्ष चलाना इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और निर्णायक है। इस समय यह कार्य पूरा करने के लिए गंभीरता से ध्यान देने की जरूरत है। आम लोगों के बीच पार्टी को बनाये बिना, और पार्टी में नये खून को इस समय लाये बिना, हम जो सोच रहे है, वह केवल एक ख़्वाब बनकर रह जायेगा।

पार्टी को हर स्तर पर मजबूत करना होगा। केंद्रीय कमिटी, क्षेत्रीय कमिटी और बुनियादी संगठनों, इन सभी को एक योजना के मुताबिक काम करना होगा। पार्टी के सभी संगठनों को पार्टी के केन्द्रित नेतृत्व को मजबूत करने के लिये योगदान देना होगा।

पार्टी के अखबार को एक अहम् भूमिका अदा करनी होगी, जो है

1–मजदूर वर्ग के लिये एक नियमित अख़बार होना

2–केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र होना, जो सारी पार्टी को अगुवाई देगा

3–पार्टी रूपी इमारत के निर्माण के लिये पाइट बनना

हमारी पार्टी का अख़बार ज्यादा से ज्यादा अगुवा मजदूरों में पहुंचे और उनकी सेवा करे। उसकी गुणवत्ता, उसका सार और हिन्दोस्तानी भाषाओं में उत्पादन की नियमितता की ओर गंभीरता से ध्यान देने का निर्णय इसलिये लिया गया है। इस समय केन्द्रीय कमेटी हिन्दी भाषा में पाक्षिक निकालेगी, जिसका नाम होगा, "मजदूर एकता लहर"। अलग–अलग क्षेत्रों में अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में अखबार निकालने के काम को मजबूत करना चाहिये। इस अखबार का अंग्रेजी संस्करण भी उपलब्ध रहेगा।

हमें लेनिन के फामूर्ले को लागू करने के लिये संघर्ष करना चाहिये, जिसके मुताबीक सभी क्षेत्रों के बुनियादी संगठनों को अपने वक्त और साधनों का 1/4 हिस्सा पार्टी अखबार के लिये देना चाहिये। इसका मतलब है कि सभी बुनियादी संगठनों को पार्टी अखबार को बेचने के काम में हिस्सा लेना चाहिये। उन्हें अखबार के बारे में मजदूरों और अन्य कम्युनिस्टों की प्रतिक्रिया पर गंभीरता से चर्चा करना चाहिए और अखबार में जो लिखा है उसपर उनकी राय भी लेनी चाहिए। उन्हें अपने कार्य की रिपोर्ट और अपने विचार और टिप्पणियां, तथा अखबार के लिये लेख भी भेजने चाहिये। एक पार्टी संगठन कितनी गंभीरता से अखबार बेचने का, लेखों के जरिये योगदान देने और उस पर लोगों की प्रतिक्रिया भेजने का काम करती है, यह उस पार्टी की कार्यकुशलता और स्वास्थ्य का प्रतिक है। फैक्ट्री गेटों और अन्य जगहों पर बड़े पैमाने पर अखबार को बेचने का जाना पहचाना और परखा हुआ तरीका किसी भी कारण से नहीं छोड़ना चाहिये। यही तरीका है जिससे हमारी पार्टी इतने सालों से बनाई गयी है। और यह हमारी पार्टी की पारम्परिक ताकतों मे से एक है। अगर पार्टी के विचार और रवैयें नियमित तौर पर मजदूरों और मेहनतकशों के बीच नहीं पहुंचते और उनपर चर्चा नहीं होती, तो फिर किस तरह से हम क्रांतिकारी मोर्चा बना पायेंगे? अखबार बेचने की संख्या में वृद्धि करना इसलिए बहुत महत्वपूर्ण है। चलो अभी हम 10,000 प्रतियां बेचने का लक्ष्य रखे और इस साल के अंत तक इसे 50,000 तक पहुंचायें। केन्द्रीय कमिटी के साथ सलाह मशवरा करके हर एक क्षेत्रीय कमेटी अपने लक्ष्य तय करे।

हिन्दी भाषा में एक गुणवत्तापूर्ण पार्टी अखबार निकालने के लिये, कॉमरेडों की एक टीम, योजना बद्ध और संगठित तरीके से अपनी सारी शक्ति लगाकर काम करेगी, ताकि मजदूर वर्ग के लिये हिन्दोस्तानी भाषी पत्रकारिता में हम निपुणता हासिल करे।

सारी पार्टी के सदस्य और पार्टी के हितचिंतकों को इस योजना को कामयाब बनाने के लिये, हर किसी की काबीलियत के मुताबिक धनसाधन और समय देने के लिये प्रेरित और प्रवृत्त किया जायेगा।

पिछले करीब डेढ़ साल से पार्टी, मजदूर वर्ग के कार्यक्रम की रूपरेखा और महत्वपूर्ण पहलू को पेश करने में जुटी हुई है। हमने इस विस्तृत परिपूर्ण सभा में फिर से इस विषय को आंदोलन पर प्रस्तुत किये गये दस्तावेज़ में उठाया है। यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिये कि जैसे–जैसे परिस्थितीयां बदलेंगी, वैसे वैसे यह कार्यक्रम और विकसित होगा। हमारे सामने आज समस्या यह नहीं कि हमारे पास कोई कार्यक्रम नहीं, बल्कि यह कि इस कार्यक्रम पर चर्चा अगर चलती भी है तो केवल पढ़ाकू ढंग से सीमित दायरों में, मजदूर वर्ग और मेहनतकश लोगों को कार्यक्रम के इर्दगिर्द संगठित करने के बजाय, केवल आत्म–उन्नति के लिये चलती है। सभी पार्टी संगठनों को इस मुश्किल को हल करने के लिये गंभीरता से ध्यान देने की जरूरत है।

मजदूर वर्ग का कार्यक्रम विकसित करने के सवाल पर मजदूर और आम मेहनतकश लोगों के बीच चर्चा और संवाद चलाए जाने चाहिए। कम्युनिस्टों के बीच में भी ये फैलने चाहिए। कार्यक्रम के विषय पर चर्चा चलाना, क्रांतिकारी मोर्चा बनाने के लिए एक हथियार स्वरूप है। कम्युनिस्टों की एकता की पुनःस्थापना के लिए भी यह एक हथियार है। अगर हम इस कार्य को गंभीरता से नहीं लेते तो, फिर जो कुछ हम लिख रहे है, केवल कागज पर बेकार शब्द बनकर रहा जायेगा।

सिद्धान्त विकसित करने का कार्य भी बहुत महत्वपुर्ण है। हिन्दोस्तान का राजनैतिक सिद्धान्त, राजनैतिक–अर्थशास्त्र और हिन्दोस्तानी फलसफा इन क्षेत्रो मे अपना कार्य विकसित करेंगे। यह कार्य मजदूर वर्ग की मुक्ति के आंदोलन से करीबी तालमेल रखते हुए किया जायेगा।

हम अलग–अलग कम्युनिस्ट गुटों से जब चर्चा चलायेंगे, तो हमारा फौरी लक्ष्य होगा कि आंदोलन से संबंधित सवाल, कम्युनिस्ट आंदोलन में चर्चा का विषय बने। सैद्धान्तीक और विचारधारात्मक–राजनैतिक सवलों पर हम किस तरह से चर्चा और संवाद चलाएं ताकि कोई भी कम्युनिस्ट इस चर्चा से अलग नहीं रहे सके? हर एक क्षेत्रीय कमिटी को इस सवाल पर योगदान के लिए अपनी योजना बनानी चाहिये।

जन संगठन, जो कि पार्टी ने, देश और विदेश, में बनाये हैं, इन सभी संगठनों को पार्टी की केंद्रिय कमिटी नेतृत्व प्रदान करती है। इन सभी संगठनों का लक्ष्य पार्टी की क्रांति और कम्युनिज़्म की रणनिती के अनुसार है। यह बात कुछ गैर–पार्टी प्रकाशनों पर भी लागू होती है। उनके लक्ष्य के अनुसार, पार्टी की केंद्रिय कमिटी के मार्गदर्शन में, इन सभी संगठनों की विशिष्ट योजनाएं बनाई जाती है, और इन सभी संगठनों के कार्य की योजना केंन्द्रीय कमिटी की आम योजना के मुताबीक होगी। इन संगठनों में काम कर रहे सभी कम्युनिस्टों की जिम्मेदारी है कि इन संगठनों के कार्य की योजना बनाने में और उसको अमल में लाने में नेतृत्व प्रदान करें और पार्टी के राजनैतिक विचारों के लिए जनमत हासिल करें।

लोगों को सत्ता में लाने के आंदोलन को विकसित करने की एक महत्वपूर्ण पहल पार्टी नें ली है, जिसका लक्ष्य लोगों का राजनीति से उदासीनता खत्म करने के लिए गैर–पक्षपाती राजनैतिक मोर्चा बनाना है, एक ऐसा मोर्चा जिसमें दबेकुचले, मेहनतकश और मध्यम वर्ग के लोग शामिल होंगे। सन् 2000 इस हिन्दोस्तानी गणराज्य की स्थापना का 50 वां वर्ष होगा। हिन्दोस्तानी संघ का आधुनिक लोकतांत्रिक आधार पर पुनर्गठन करने की दिशा में हमें एक बेहद खुला और व्यापक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम विकसित करने के दृष्टिकोण से कार्य करना चाहिए।

1998 का साल पार्टी और हिन्दोस्तान के मजदूर और कम्युनिस्ट आंदोलन के लिए एक निर्णायक साल है। इस साल के अंत होने से पहले, हम हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की दुसरी कांग्रेस आयोजीत करने जा रहे है। ऊपर दिये गये सभी कार्यों और पार्टी की कांग्रेस संबंधित विशेष कार्यों को पूरा करने और आगे बढ़ने के लिए हम सभी को अपनी सारी शक्ति बटोरकर इस दिशा में लगाने की जरूरत है।

लोकसभा चुनाव के माहौल में, जो कि इस सभा के दो हफ्ते बाद होने जा रहे है, आओ हम अपना क्रांतिकारी मोर्चा बनाने का प्रचार शुरू करें।

"चयन के बिना, चुनाव नहीं!" "राजनैतिक प्रक्रिया के नवीकरण के लिए संघर्ष करो!" "अमीर शोषको के तीनों संगठनों को ठुकरा दो!" और "लोगों का क्रांतिकारी मोर्चा बनाओ!" पार्टी द्वारा दिये गये इन नारों को इस दौरान परखें! और बिना किसी रूकावट के, चुनावों के बाद भी इस प्रचार को निरंतर दृढता से कदम–दर–कदम विकसित करते रहें।

लोक आवाज़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स द्वारा
हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के लिए वितरित और प्रकाशित
8/251 डीडीए फ्लैट्स कालकाजी नई दिल्ली – 110 019